रामायण अध्ययन
तीस दिनों में

प्रधान सम्पादक
ओमप्रकाश गुप्ता

श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

रामायण अध्ययन

तीस दिनों में

प्रधान सम्पादक
ओमप्रकाश गुप्ता

उप सम्पादक
विनीता मिश्रा

अनुकृति सम्पादक
मधु गोयल

प्रबंध सम्पादक
शिवप्रकाश अग्रवाल

श्री राम चरित भवन, ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

प्रकाशक
श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

Publisher
Shri Ram Charit Bhavan
Houston, USA

प्रथम संस्करण 2023

ISBN: 978-1-960627-02-5

पुस्तक में निहित विषयवस्तु, तथ्य, विचार अथवा विश्लेषण के लिए उसके लेखक पूर्ण रूप से उत्तरदायी हैं। इसके समस्त अधिकार भी लेखकों के पास सुरक्षित हैं। प्रकाशक अथवा संपादक मंडल की विषयवस्तु के प्रति सहमति और उत्तरदायित्व नहीं है। पुस्तक या उसके किसी भी अंश का पुनर्प्रस्तुतिकरण किसी भी माध्यम से स्वीकार्य नहीं होगा। चाहे यांत्रिक माध्यम हो या इलैक्ट्रॉनिक; जानकारी का संचयन लिखित आज्ञा लिए बिना नहीं किया जाना चाहिए। केवल एक समीक्षक को समीक्षा में आंशिक उदधृत करने की छूट रहेगी।

The contents, facts, views, and analysis in this work are entirely the responsibility of the authors and they reserve all rights. Neither the editorial board nor the publisher is responsible of contents by the authors. No part of this book may be reproduced in any form on by an electronic or mechanical means, including information storage and retrieval systems, without permission in writing, except by a reviewer who may quote brief passages in a review.

प्रस्तावना

हरि अनंत हरि कथा अनंता। कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता।। (मानस 1.140. C5)

गोस्वामी तुलसीदास जी ने बालकाण्ड के आरंभ में ही हमें बताया कि परमात्मा अनंत हैं, उनकी कथाएँ भी अनंत हैं; संत जन उन कथाओं को विविध प्रकार से कहते हैं, सुनते हैं। लगभग 500 वर्ष पूर्व कही गई यह बात आज भी उतनी ही सार्थक, उचित और प्रासंगिक है, जितनी वह तब थी। भगवान राम की कथा विविध प्रकार से हजारों वर्षों से कही जा रही है। गोस्वामी तुलसीदासकृत 'रामचरितमानस' पहले भारत में, फिर समस्त विश्व में अत्यधिक प्रचलित हुई। आज भी विश्व के कोने-कोने में रामचरितमानस का अध्ययन व पाठ होता है।

गीता प्रेस से प्रकाशित रामचरितमानस में 12,503 पंक्तियाँ हैं, इसमें संस्कृत में लिखे हुए श्लोकों की पंक्तियों की गणना शामिल नहीं है। ये पंक्तियाँ मुख्यतः अवधी और हिन्दी की अन्य बोलियों जैसे ब्रज, बुन्देलखंडी, भोजपुरी आदि में हैं। यद्यपि इनका हिन्दी में और अन्य भाषाओं में अनुवाद प्राप्य है; तथापि समय के अभाव के कारण इस महान ग्रंथ का अध्ययन करना सब के लिए संभव नहीं हो पाता। इस भाव से प्रेरित होकर 'रामायण अध्ययन 30 दिनों में' की रचना हुई।

इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य प्रतिदिन 10 मिनट का समय देकर 30 दिनों में रामचरितमानस का अध्ययन करना है। पुस्तक में पूर्ण मानस को 30 दिनों में विभाजित कर 16 विद्वान मित्रों ने 30 आलेख लिखे हैं। हर आलेख के तीन भाग है: पहले - उस दिन का कथा सार, मध्य में आध्यात्मिक सार, और अंत में जीवन में उसकी उपयोगिता। इसमें पूरा प्रयास किया गया है कि सरलतम भाषा का प्रयोग किया जाये ताकि हर किसी को समझने में आसानी रहे। मैं इस पुस्तक के सहलेखक श्रीमती शैल अग्रवाल, डॉ. सरोज अग्रवाल, डॉ. मधु चतुर्वेदी, श्री राकेश कुमार चौबे, डॉ. विनय शर्मा, डॉ. रश्मि वार्ष्णेय, सुश्री विनीता मिश्रा, डॉ. राजरानी शर्मा, श्री राजेश कुमार मिश्रा, डॉ. शिवप्रकाश अग्रवाल, डॉ. संजना मिश्रा, श्री राम मल्लिक, श्रीमती नीलम झा, श्रीमती रुमा रानी गोयल, व डॉ. नीलम जैन का आभारी हूँ। सुश्री विनीता मिश्रा का विशेष आभारी हूँ, जिन्होंने इस के सम्पादन में मेरी अमूल्य सहायता की। श्रीमती मधु गोयल का भी आभारी हूँ, जिन्होंने पुस्तक का बड़ी बारीकी से प्रूफ-रीडिंग किया। अपने प्रिय अनुज डॉ. शिवप्रकाश अग्रवाल के विषय में क्या कहूँ, जो लक्ष्मण की भाँति अपने अग्रज के हर कार्य के लिए सदा तत्पर रहते हैं। प्रिय शिव! प्रभु राम तुम्हें सदैव प्रसन्न रखें।

अंत में, अपने साकेतवासी माता-पिता और सभी गुरुओं के चरण कमलों को सादर प्रणाम करता हूँ, जिनके आशीर्वाद के बिना मेरे जीवन में कुछ भी संभव नहीं। यद्यपि पूरा प्रयास रहा है कि पुस्तक में त्रुटियाँ न रहें, तथापि जो भी त्रुटियाँ रह गईं हों, उनके लिए मैं अकेला दोषी हूँ, अत: क्षमाप्रार्थी हूँ। जय सिया राम।

सादर,
ओमप्रकाश गुप्ता
प्रधान सम्पादक
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

रामायण अध्ययन
तीस दिनों में

1

बालकाण्ड (आरंभ - दोहा 29)

ओमप्रकाश गुप्ता

कथा सार

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित श्री रामचरितमानस सात खंडों में विभाजित है, जिन्हें काण्ड/सोपान कहा जाता है। इन में प्रथम काण्ड है -'बालकाण्ड'। यह काण्ड सातों काण्डों में सब से बड़ा है। इस काण्ड के प्रथम अर्द्ध भाग में देवी-देवताओं की व अन्य स्तुतियाँ हैं, मानस के निर्माण का वर्णन है, शिव जी की पत्नी देवी सती के भ्रम की कथा के साथ-साथ पार्वती-जन्म और उनके शिव जी के साथ विवाह का वर्णन है। इस के बाद श्रीराम के मानव अवतार लेने के विविध कारणों का वर्णन है। शेष अर्द्ध भाग में भगवान के प्रकट होने, उनकी बाललीला, विश्वामित्र के साथ गमन और सीता जी के साथ विवाह का वर्णन है।

गोस्वामी तुलसीदास जी बालकाण्ड का आरंभ संस्कृत के सात श्लोकों से करते हैं। प्रथम श्लोक में वे माँ शारदा और गणेश जी की वंदना करते हैं। बाद के चार श्लोकों में भगवान शिव, माता पार्वती, अपने गुरु, आदिकवि वाल्मीकि, हनुमान जी तथा सीता जी की वंदना करते हैं। छठे श्लोक में वे अपने इष्ट श्रीराम की वंदना करते है। अंतिम श्लोक में वे कहते हैं - रामचरितमानस में वही सब कुछ है, जो उन्होंने अन्य ग्रंथों (वेद, पुराण, शास्त्र, वाल्मीकि रामायण, आदि) से उपलब्ध किया है और अंत में वे घोषित करते हैं कि इस रचना का एक मात्र उद्देश्य स्वयं का सुख है।

इन सात श्लोकों के बाद वे पाँच सोरठों मे पुनः वंदना करते हैं – गणेश जी, परमपिता परमात्मा श्री नारायण, शिव जी और अपने गुरु की। इसके बाद वे विस्तार से गुरु की व्याख्या तथा संत की परिभाषा देते हुए संतों की वंदना करते हैं। फिर वे असंत कौन हैं; यह बताते हैं और उनकी भी वंदना करते हैं। वे हमें समझाते हैं कि हमें असंतो की वंदना क्यों करनी चाहिए। आगे वे अत्यंत विनम्रता के साथ स्वयं को राम-कथा का वर्णन करने में अयोग्य घोषित कर देते हैं; किन्तु कविता में राम नाम होने से यह यश प्राप्त करेगी, ऐसा दृढ़ विश्वास भी प्रकट करते हैं।

गोस्वामी जी, अब तक जिन कवियों (जैसे वाल्मीकि, व्यास आदि) ने हरि कथा कही है; उनका गुणगान करते हुए वेद, ब्राह्मण, पंडित, ग्रह, सरस्वती, गंगा, शिव-पार्वती आदि की वंदना करते हैं। अब वे अयोध्या जी और सरयू जी की वंदना करते हुए अवधनरेश महाराज दशरथ की वंदना करते हैं। फिर महाराज जनक और राम के तीनों अनुज भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न की वंदना करते हैं। फिर वे हनुमान, जाम्बवंत और विभीषण की वंदना करते हुए माता सीता और भगवान श्रीराम की वंदना करते हैं। अंत में वे राम के नाम की महिमा बताते हुए उसकी विस्तार से व्याख्या करते हैं और यहाँ तक कह देते हैं - "राम स्वयं भी अपने नाम के गुणों का वर्णन करने में असमर्थ हैं।" उनका कहना है कि कलियुग में न कर्म है, न भक्ति है, न ही ज्ञान है; बस राम-नाम ही एक आधार है।

इस भाग में तुलसीदास जी की उदारता और विनम्रता का बोध होता है। वे बार-बार इस बात को स्वीकारते हैं कि राम के गुणों और उनकी कथा का वर्णन करने का उनका मन अवश्य है; किन्तु इस कार्य के लिए उनकी कोई सामर्थ्य नहीं है। उनके पास न तो बुद्धि है, न ही भाषा या कवित्त। उनकी बुद्धि तुच्छ और इच्छा उच्च श्रेणी की है। इसको वही लोग सुनेंगे और सराहेंगे जिनको राम के चरणों में प्रीति है।

आगे तुलसीदास राम के नाम की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं - इस नाम के दोनों अक्षर र और म सम्पूर्ण वर्णमाला में सबसे महत्वपूर्ण हैं। सगुण और निर्गुण के बीच ये नाम ही सुन्दर साक्षी हैं। राम का मिलना तो दुर्लभ है; किन्तु नाम न केवल सुलभ है, अपितु राम से मिलाने का साधन भी है। यह वही नाम है जिसका शिव उमा सहित निरंतर जाप करते रहते हैं। राम नाम से अमंगल वेश धरने पर भी शिव सम्पूर्ण विश्व के लिए शंकर अर्थात कल्याणकारी और मंगलदायक हो जाते हैं। इस नाम को जपने वालों के भाव, भक्ति और गति का भी वर्णन करते हैं। नारद, भक्त प्रहलाद, ध्रुव, गज, गणिका और अनेक सिद्ध योगियों का भी उल्लेख करते हैं।

आध्यात्मिक सार

मानस के इस प्रथम भाग में यद्यपि राम-कथा का वर्णन नहीं है; तथापि राम-कथा को समझने के लिए इसे समझना अति आवश्यक है। जीवन में बुद्धि, विचार, वाणी, ज्ञान, संगत, गुरु के महत्त्व, संतों की पहचान, और दूसरों के प्रत्यक्ष और परोक्ष योगदान को समझना कितना आवश्यक है, इस पर तुलसी बाबा ने आरंभ में हमें समझाया है। भगवान के 'नाम' में क्या है और उसका क्या महत्त्व है, इसे मानस ने हमें भलीभाँति समझाया है।

हर युग में भगवान को पाने, जानने, जुड़ने के अनेक साधन हैं; किन्तु कलियुग में सभी के तन, मन और वातावरण में इतना दोष है कि यज्ञ, जप, तप करना कठिन होगा। अतः राम का नाम ही हर मुश्किल में सहारा बनेगा।

जीवन में उपयोगिता

1. किसी भी शुभ कार्य को आरंभ करने के पहले हमें श्री गणेश जी की स्तुति करनी चाहिए।
2. किसी बौद्धिक/शैक्षिक कार्य को आरंभ करने के पहले माँ सरस्वती की स्तुति करनी चाहिए।
3. फिर अपने सभी देवी-देवताओं और इष्ट देव को वंदन करना चाहिए।
4. हमारे जीवन में गुरु का बड़ा महत्त्व है, अतः अपने सभी गुरुओं को वंदन कर उनका आशीर्वाद लेना चाहिए।
5. हमें जानना चाहिए कि संत (सज्जन) कौन है और असंत (दुर्जन) कौन, और दोनों को ही प्रणाम करना चाहिए।
6. हम जो भी करें, इस भाव से करें कि हम अपने सुख के लिए कर रहे हैं; पर करें विश्वहित के लिए। इस भावना से नहीं कि किसी पर उपकार कर रहे हों।
7. हमें उन सभी को उनके किए हुए कामों का श्रेय देना चाहिए, जिनकी वजह से आज हम कुछ कर पाने में समर्थ हैं।
8. हम यह जान लें कि प्रभु जड़-चेतन में अर्थात सर्वत्र व्याप्त हैं। सब में हम राम को देखें; इसी में विश्व-कल्याण है।
9. हम कितना भी बड़ा काम कर लें, कितना ही ऊँचा पद प्राप्त कर लें, कितने भी समृद्ध हो जाएँ, हमें सदैव विनम्र रहना चाहिए।
10. कलियुग में मुक्ति का एक ही आधार है -'प्रभु का नाम'।

2

बालकाण्ड (दोहा 29 - 65)

शैल अग्रवाल

कथा सार

सभी देवी-देवताओं के वंदन के बाद तुलसीदास हमें बताते हैं कि जिस राम कथा का सर्जन वे करने वाले हैं; यह वही कथा है, जिसे शिव जी ने पार्वती को सुनाई थी। उनसे इस कथा को याज्ञवल्क्य जी ने पाकर भरद्वाज मुनि को वही कथा मैंने अपने गुरु से सूकर के खेत में सुनी। फिर गोस्वामी जी ने इस कथा के प्रभाव और महत्त्व को बताया है। प्रभु राम से अधिक दयालु भला कौन होगा; जिन्होंने बंदर और बंदर-सी प्रकृति के साधारण मानवों को भी गुण और विवेक देकर अपने साथ लिया, अपने साथ बैठने लायक बनाया।

वे इस सर्जन के नाम का वर्णन करते हुए इसके विभागों, छंद आदि का बखान करते हैं। सात काण्ड ही इस मानस-सरोवर की सुंदर सात सीढ़ियाँ हैं; जिनको ज्ञानरूपी नेत्रों से देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है। रघुनाथ की निर्गुण और निर्बाध महिमा का वर्णन ही इस सुंदर जल की अथाह गहराई है। वे कहते हैं - "रघुपति-भक्ति 'वर्षा-ऋतु' है, जो सींचती और तृप्त करती है; हर्ष और हरियाली लाती है। अच्छे भक्त 'धान' के समान हैं; जो समाज को पोषित और सुदृढ़ करते हैं। 'रा' व 'म' - रामनाम के ये दोनों अक्षर ही श्रावण और भादों मास हैं—उजाला-अँधेरा, सुख-दुख, जीवन-मृत्यु, सृष्टि के सारे रहस्यों को खुद में समेटे हुए हैं।"

यह रामकथा अपरिमित है। इसे शारदा, शेषनाग व शिव जी तक नहीं बखान पाये और 'नेति-नेति' यानी 'यह नहीं या ऐसे नहीं,' कह-कहकर ही इस सरल कथा की अगम गूढ़ता को बखानते रह गए। तुलसीदास कहते हैं - "इसे पूर्णतः शब्दों में समेट पाना या समझ पाना हम साधारण व्यक्तियों के बस की बात ही नहीं।" फिर भी उन्होंने इस कथा में वर्णित प्रसंगों का संक्षिप्त परिचय दे दिया है। मानस में राम के चरित्र का वर्णन उन्होंने स्वयं के अतिरिक्त याज्ञवल्क्य, कागभुशुण्डी और शिव के माध्यम से कहा है। उनसे कथा सुनने वाले संवाद के माध्यम से प्रश्न और जिज्ञासा प्रकट करते हैं, जिनके उत्तर देते हुए वे सभी जिज्ञासाओं का समाधान करते चलते हैं।

शिव-पार्वती संवाद के माध्यम से हम सती-कथा सुनते हैं। कैसे सती माँ सीता का ही छद्म रूप धरकर 'राम ब्रह्म हैं या नहीं', यह जानने के लिए उनसे मिलने गईं और फिर लौटकर पति से झूठ बोलीं कि बस प्रणाम करके ही लौट आई हूँ; किन्तु अंतर्यामी शिव सब जान जाते हैं और सीता माँ का रूप धारण करने वाली सती को अब पत्नी-रूप में नहीं स्वीकार सकते। अंततः सती को शरीर त्यागना पड़ता है। शिव एक सांसारिक प्रेमी की तरह ही दुःखी होते हैं; सती पुनः पार्वती के रूप में जन्म लेती हैं और अपने तप के बल पर पुनः शिव को पति-रूप में प्राप्त करती हैं। इस कथा के बाद तुलसीदास शिव पार्वती विवाह-उत्सव के मनोहारी वर्णन में रम जाते हैं।

आध्यात्मिक सार

इस प्रसंग में रामकथा का संभाषण जिन चार गुरुओं द्वारा किया जा रहा है, उसका उद्देश्य है कि संसार में जीव की क्षमता एवं योग्यता के अनुसार उसे ब्रह्म का ज्ञान देने वाले ज्ञानी गुरु मिल ही जाते हैं; बस प्राणी के भीतर ब्रह्म को जानने की प्रबल जिज्ञासा होनी चाहिए। 'यथा शिष्य तथा गुरु' ईश्वर की कृपा से सुलभ होते हैं। ज्ञानमार्गी, प्रेममार्गी, वैरागी या शरणागति भाव; जैसे जिसका भाव उसे वैसे ही गुरु ब्रह्म से साक्षात्कार करवा सकते हैं; किन्तु प्राणी के भीतर जिज्ञासा, गुरु के प्रति समर्पण और विश्वास होना चाहिए न कि संदेह और अविश्वास।

शिव ही परम ज्ञानी हैं, ज्ञान से वैराग्य आता है। शिव संसार के प्रथम गुरु हैं। उनके शिष्य के रूप में सती सुपात्र नहीं हैं क्योकि वे शंका, दक्षता और असत भाषण से भरी हुई हैं। इन दोष-विकारों को कठिन तपस्या से ही दूर कर पार्वती की भांति सुपात्रता को प्राप्त किया जा सकता है। उसके मन की जिज्ञासा और पूर्ण समर्पण भाव ही उसे पुनः शिव का सान्निध्य दिला सकता है; तब शिव सम्पूर्ण राम कथा प्रेम सहित उन्हें बता देते हैं। हमें भी शंकालु और अभक्तों से नाहक बहस कर उन्हें सहमत करने का निरर्थक प्रयास नहीं करना चाहिए।

अविश्वास झूठ का सहारा लेकर हमें गुरु और ब्रह्म दोनों से विमुख कर देता है और फिर जीव को पुनः नया शरीर धारण कर तप के द्वारा स्वयं के दोषों को दूर कर गुरु के लायक स्वयं को बनाना और सिद्ध भी करना पड़ता है, तभी गुरु जीव को स्वीकार करता है, अंगीकार करता है; फिर जो प्रेम और ज्ञान की गंगा बहती है, उससे सम्पूर्ण विश्व निर्मल हो जाता है। अपने दोषों को दूर कर निर्मल स्वभाव की प्राप्ति ही जीव के पुनर्जन्म का सिद्धांत है।

मानस के बारे में तुलसीदास विनती करते हैं कि इसे कपट और छल से दूर रहकर ही हम सुनें और समझें; तभी इस कलियुग में सहज रहा जा सकता है। इस जटिल 'कलि विशेष' में रामकथा के अलावा कोई और उपाय नहीं है।

जीवन में उपयोगिता

1. जीवन में प्रेम के लिए निष्ठा और विश्वास बहुत महत्वपूर्ण हैं।
2. आपसी संबंधों में दुराव का परिणाम विनाशकारी होता है।
3. शंका मनुष्य की शत्रु है।
4. अपमान का सामना करना बहुत कठिन है।
5. आत्मसम्मान की रक्षा करना मनुष्य का धर्म है।
6. असत्य भाषण से मनुष्य का कभी कल्याण नहीं होता।
7. दम्पति को अपने विचार एक दूसरे पर थोपने नहीं चाहिए।
8. शंकालु व्यक्ति को सत्संगति से भी लाभ नहीं होता।
9. स्वयं की दक्षता का भाव अज्ञानता का सूचक है।
10. जबकि पिता, मित्र, गुरु और स्वामी के यहाँ जाने के लिए निमंत्रण की आवश्यकता नहीं है, तब भी वहाँ यदि कोई भी आपसे विरोध माने बैठा है तो नहीं जाना चाहिए।
11. पति-पत्नी में वैचारिक मतभेद होने पर मौन धारण करने से कलह नहीं होती और दूसरे व्यक्ति को स्वयं ही अपनी भूल का अहसास होता है।

3

बालकाण्ड (दोहा 65 - 102)

शैल अग्रवाल

कथा सार

नारद की प्रेरणा से पार्वती ने अपने लिए शिव को पति-रूप में पाने का संकल्प किया; किन्तु उनकी माता मैना को ऐसा वर स्वीकार नहीं हुआ। पति हिमाचल के समझाने पर भी जब वे पार्वती को इस प्रकार की शिक्षा देने को तैयार नहीं हुईं तब हिमाचल ने उन्हें नारद की वाणी का रहस्य और शिव के गुणों का बोध कराया। पार्वती अपने माता पिता की सहमति से अमंगल वेशधारी किन्तु स्वभाव से कल्याणकारी शंकर को अपने पति के रूप में प्राप्त करने के लिए वन में तपस्या करने चली गयीं। पार्वती के वन में तप हेतु चले जाने से उनके प्रियजन दुखी हो गए, तब वेदशिरा मुनि ने आकर पार्वती के जगदम्बा स्वरूप के बारे में बताकर सबको शांत और संतुष्ट किया।

उधर सती के देह त्याग के पश्चात शिव वैरागी हो गए और जहाँ-तहाँ भ्रमण करने लगे। वे घूम-घूम कर राम के गुणों को सुनने लगे। उनकी विचलित अवस्था को देखकर भगवान राम ने प्रकट होकर उनके मन को शांति प्रदान की और सती के पुनः पार्वती-रूप में जन्म लेने की बात से अवगत कराया। शंकर का मन स्थिर हुआ और वे शांतचित्त होकर समाधिस्थ हो गए।

इसी बीच तारकासुर नामक राक्षस के अत्याचार से देवता लोग त्रस्त हो गए। वे सभी इस दुष्ट के अंत को जानने के लिए ब्रह्मा के पास गए। तब ब्रह्मा ने बताया कि शंकर के पुत्र द्वारा ही तारकासुर का वध हो सकेगा; परन्तु शंकर तो समाधि में लीन हैं। उन्हें जगाकर विवाह के लिए प्रेरित करने के लिए कामदेव को भेजा गया। फिर सबके कल्याण का मंतव्य समझकर कामदेव ने स्वयं को तैयार किया। कामदेव के प्रभाव से सम्पूर्ण सृष्टि काम के वशीभूत हो गई। जैसे ही वह शंकर के पास अपना प्रभाव डालने पहुँचा, शंकर ने क्रोधित हो अपने तीसरे नेत्र को खोलकर उसे भस्म कर दिया। कामदेव की पत्नी रति द्वारा विलाप करने पर शिव ने वरदान दिया कि अब से काम बिना अंग के ही सबको व्याप्त करेगा और अनंग कहलायेगा। द्वापर युग में कृष्ण के पुत्र के रूप में पुनः सशरीर उत्पन्न होगा। अब देवताओं के कष्ट निवारण हेतु वे विवाह को प्रस्तुत हुए। कठिन तपस्या और परीक्षा के पश्चात शंकर पार्वती के विवाह का संयोग बना।

जब शिव जी के कहने पर सप्तऋषि पार्वती की परीक्षा लेते हैं और शिव को सर्वथा उनके लिए अयोग्य कहते हैं; पार्वती अपने उत्तर से उन्हें संतुष्ट करती हैं। वे पार्वती से कहते हैं, "तुमने हमारा कहना न मानकर नारद के कहने पर शिव को पति के रूप में पाने के लिए घोर तप किया, अब तो शिव ने काम को ही भस्म कर दिया।" तब पार्वती कहती हैं - "आपके अनुसार शिव ने अब काम को भस्म किया है अर्थात् अभी तक वे कामादि दोष सहित थे; किन्तु मेरे लिए तो वे सदा से ही योगी, अजन्मे, अनिंद्य, अविकारी और कामरहित हैं।" इस प्रकार पार्वती के प्रेम की दृढ़ता को देखकर सप्तर्षि हिमवान के पास जाते हैं और शिव पार्वती के विवाह का लग्न निश्चित कर विवाह की तैयारी करवाते हैं।

शिव के गणों ने कैसा सुंदर और विचित्र दूल्हा सजाया है - दूल्हे के सिर पर चंद्रमा सुशोभित है और शरीर पर राख का लेप है; साँप और कपाल के गहने हैं; वह नंगा, जटाधारी और भयानक है; साथ में भयानक मुख वाले भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनियाँ और राक्षस हैं। उनका श्रृंगार देख कर विष्णु देवताओं के साथ हँसी-ठिठोली भी करते हैं, जो

वैवाहिक अवसरों पर सुन्दर दृश्य उपस्थित करती है। पार्वती की माता शिव का यह रूप देखकर मूर्च्छित हो जाती हैं और सोचती हैं कि उनकी इतनी रूपवान बेटी का इतना कुरूप और बेढंगा दूल्हा! परन्तु फिर प्रभु और पुत्री की इच्छा मानकर विवाह की सभी रस्में विधिवत करवाती हैं।

आध्यात्मिक सार

यह संसार स्त्री और पुरुष के संतुलन से चलता है। दोनों ही शक्तियों का पारस्परिक समन्वय बहुत आवश्यक है। एक का भी विछोह दूसरे को उद्वेलित कर सकता है। राम के शरणागत होने से उसे शांति मिलती है और वह पुनः सृष्टि के संचालन के कल्याणकारी रूप को प्राप्त होता है। यदि मनुष्य कामनाओं और काम-वासनाओं के प्रभाव से घिर जाये तो उसका विवेक ही इनका प्रभाव नष्ट कर सकता है। स्वयं को निखारने के लिए स्वयं ही कठिन परिश्रम करना पड़ता है। सद्गुणों, सत्कर्मों की प्रेरणा एवं ईश्वर से जुड़ने के लिए एकांत अत्यंत आवश्यक है। कठिन परिश्रम के बाद भी हमें अनेक परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है।

विवाह रूपी सत्कर्म कामवासना के अधीन होकर नहीं करना चाहिये। जगत के कल्याण की इच्छा ही विवाह का मूल कारण है। कामदेव स्वयं भी विश्व कल्याण के हित के लिए अपने प्राण देने को तैयार हैं। संसार इच्छाओं और कामनाओं के अधीन है इसलिए सबके कल्याण की कामना ही सात्त्विक कामना है। कृष्ण के पुत्र रूप में कामदेव का पुनः जन्म लेना भी यही बताता है कि कृष्ण के कार्यों को आगे संपादित करना ही कामनाओं के स्वामी का कर्त्तव्य है।

जीवन में उपयोगिता

1. मनुष्य चाहे तो कुछ भी हासिल कर सकता है। हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। अंततः जीत श्रम और साधना से ही मिलती है।
2. इस संसार में मनुष्य के बाहरी रंग रूप से कोई निश्चय नहीं कर लेना चाहिए, बल्कि उसके गुणों को समझने का प्रयास करना चाहिए।
3. अपनी सामर्थ्य का उपयोग लोकहित के लिए करने वाले को कोई दोष नहीं देता।
4. विवाह, दाम्पत्य और संतान उत्पत्ति के पीछे कामवासना नहीं, लोकहित की भावना होनी चाहिए।
5. शंकर पार्वती का विवाह विश्व को यह सीख प्रदान करने का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।
6. किसी भी उद्देश्य को पूरा करने में अनेक कठिनाइयाँ और बाधाएँ आती हैं।
7. मंगल उत्सवों में सबकी भागीदारी कार्य को आनंददायक बनाती है।
8. हमारे समाज में जो निर्बल, उपेक्षित वर्ग है, उसे भी अपनाना चाहिए और उन्हें अपने मंगल कार्यों में साथ रखना चाहिए। केवल संपन्न और संभ्रांत लोग ही हमारे परिवार का हिस्सा नहीं होने चाहिए।

4

बालकाण्ड (दोहा 102 - 152)

सरोज अग्रवाल

कथा सार

वेद वर्णित विधि के अनुसार हिमवान शिव-पार्वती को विवाह के पश्चात विदा करते हैं। उनका विवाह कार्तिकेय के जन्म का हेतु था। मुनि भरद्वाज के निवेदन पर ऋषि याज्ञवल्क्य जी ने शिव-कथा को राम-कथा से जोड़ते हुए कथा का सूत्र थामा। भरद्वाज जी की जिज्ञासा पर कि राम परब्रह्म हैं या दशरथ पुत्र; याज्ञवल्क्य जी ने राम के विषय में कहना आरम्भ किया।

उधर माता पार्वती शिव से विनम्रता से पूछती हैं -"हे प्रभो! आपके अनुसार परमार्थ तत्व (ब्रह्म) के ज्ञाता मुनियों ने श्रीराम को अनादि ब्रह्म कहा है। शेष, सरस्वती, वेद, पुराण, और आप स्वयं; सभी रघुनाथ जी के गुण गाते हैं। ये राम वही; अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र हैं अथवा अजन्मा, निर्गुण, अगोचर कोई और राम हैं? पार्वती के द्वारा निर्गुण और सगुण में भेद को लेकर शिव अनेक प्रकार से निर्गुण और सगुण को अभेद बताते हुए कहते है कि वेद वर्णित निर्गुण ब्रह्म ही भक्तों के प्रेम के कारण सगुण रूप धरता है। वैसे तो उसके अवतार की अनेक कथाएँ और कारण हैं; किन्तु उनमें से मैं कुछ तुमसे कहता हूँ। तुम सावधान होकर सुनो।

भगवान श्रीहरि के दो प्रिय पार्षदों 'जय' और 'विजय' को सनत कुमारों के शाप के कारण तीन बार राक्षस रुप में जन्म लेना पड़ा। प्रथम बार उन्हें हिरण्यकश्यपु एवं हिरण्याक्ष के रूप में जन्म लेना पड़ा, जिनको भगवान ने नृसिंह और वराह रूप ले मुक्त किया और भक्त प्रहलाद की भक्ति को प्रतिष्ठित किया। त्रेतायुग में वे राक्षस पुनः रावण और कुम्भकर्ण नाम के बहुत बलवान विश्वविजेता राक्षस हुए। उनकी मुक्ति के लिए भगवान ने भी मानव अवतार लिया। रावण और कुम्भकर्ण के लिए वे दशरथ और कौशल्या के पुत्र के रूप में अवतरित हुए।

एक बार तो नारद के शाप को सत्य प्रमाणित करने के लिए भगवान ने अवतार लिया और कष्ट भी सहे। यह सुनकर पार्वती को बहुत आश्चर्य हुआ। उनके कहने पर शिव ने बताया कि एक बार प्रकृतिकी गोद में जाकर नारद को राम के चरणों में प्रेम उमगा और सहज समाधि में चले गए। नारद की तपस्या को देख देवराज इंद्र भयभीत हो गए और उन्होंने कामदेव को भेजा। कामदेव ने नारद को डिगाने का प्रयास किया; किंतु असफल रहा। उसके इस प्रयास से नारद को क्रोध भी नहीं आया। इस बात का नारद को बड़ा अहंकार हो गया। अपनी इस उपलब्धि का बखान उन्होंने देवों की सभा में, ब्रम्हा जी से और भगवान शिव से भी किया। शिव उनकी आत्मप्रशंसा को समझ गए और उनसे कहा कि इस बात का जिक्र नारायण से कभी न करें। यदि प्रसंग आये भी तो टाल जाएँ; पर नारद अपने इष्ट को अपनी उपलब्धि बताने की चाह से बच न पाए और भगवान विष्णु से इस बात का जिक्र कर बैठे। भगवान ने उनके मन में उगते हुए इस अहम् भाव को पहचान लिया। उनको इस अहंकार से मुक्त करने के लिए भगवान ने उनके मन में कामवासना को उत्पन्न कर उन्हें उनकी कमज़ोरी का बोध कराया।

मायारचित एक नगरी की सुंदरी राजकन्या पर वे मोहित हो गए; उसका पति त्रिलोक का स्वामी होगा ये देखकर वैरागी नारद के मन में लालसा और कामना दोनों जाग उठीं। उन्होंने भगवान से ऐसा रूप माँगा कि राजकुमारी

उनके रूप पर मोहित होकर उनका ही वरण कर ले। उनको इस लालसा से बचाने के लिए भगवान ने उन्हें कुरूप कर दिया और उन्हें इस विवाह से वंचित कर स्वयं लक्ष्मी रूपी कन्या को वर लिया। इस बात से नारद को बहुत क्रोध हुआ। उन्होंने भगवान विष्णु को शाप दे दिया कि जिस शरीर को धारण कर तुमने मुझे ठगा है, तुम भी वही शरीर धारण कर स्त्री वियोग में दुःख पाओ। जैसी मेरी वानर की शक्ल की है, उन्हीं से तुम्हे सहायता माँगनी पड़े। शाप देते ही नारद को बोध हो गया कि भगवान उनके दोषों को मिटाना चाहते थे; किंतु तब तक नारद काम और क्रोध के वश में हो चुके थे और भगवान को शाप दे बैठे। उनका भक्त काम-क्रोध से मुक्त हुआ, इसलिए भगवान ने 'नर-देह' धर स्त्री वियोग और वानर सहयोग को स्वीकार किया।

मनु और शतरूपा अपने सांसारिक कर्त्तव्यों को निभाकर ईश्वर की साधना के लिए वन को गए। वर्षों के कठोर तप के पश्चात् भी उन्हें केवल ईश्वर के साकार रूप के दर्शन की ही इच्छा थी और वह जब पूरी हुई तो दम्पति पूर्ण रूप से कामपूरित हो गए; किन्तु भगवान के दर्शन की इच्छा कम नहीं हुई। अतः उन्होंने उन्हीं के समान पुत्र की माँग की। भगवान् अपने जैसा कहाँ से लाते; इसलिए उनकी प्रेम भरी माँग को पूरा करने के लिए उन्होंने उनका पुत्र होना स्वीकार किया।

आध्यात्मिक सार

1. ईश्वर को भेद-रूप में देखना जीव का अज्ञान है।
2. सगुण-निर्गुण में कोई भेद नहीं है। जीव की आस्था और विश्वास उसे ईश्वर का बोध कराता है।
3. ईश्वर को जानने की इच्छा होने पर, ज्ञान के अहंकार से मुक्त होकर शिष्य के भाव से ही गुरु के पास जाना चाहिए।
4. जो अनादि, अनंत, निर्गुण, निरंजन, निर्विकार है, उसे बुद्धि से नहीं जाना जा सकता; किन्तु उसे जानने की चेष्टा करना भी प्राणी का बौद्धिक धर्म है।
5. 'ज्ञान' अहंकार का कारण बनता है और 'कामना' क्रोध का। इनसे मुक्त होने के लिए भगवान की शरण ही श्रेष्ठ उपाय है।
6. काम ही क्रोध का कारण है, क्रोध में व्यक्ति को उचित-अनुचित का बोध नहीं रह जाता।
7. ईश्वर केवल दयालु और कृपालु हैं। काम-क्रोध से परे हैं।
8. वे केवल प्रेम स्वरूप हैं।
9. प्रेम के लिए वे निराकार-साकार होने को भी तैयार हैं।

जीवन में उपयोगिता

1. किसी प्रकार की जिज्ञासा होने पर उसकी जानकारी ऐसे व्यक्ति से लेनी चाहिए, जिसे उस विषय की जानकारी हो।
2. अपनी उपलब्धियों का बखान करने से अहंकार बढ़ता है।
3. अहंकार से ही इच्छाएँ पैदा होती हैं, लोभ बढ़ता है, जो पतन की ओर ले जाते हैं।
4. बिना सोचे-विचारे कोई बात नहीं कहनी चाहिए।
5. किसी का उपहास नहीं करना चाहिए।
6. बड़ों की सीख पर ध्यान देना चाहिए।
7. प्रेम से बढ़कर न कोई तप है, न वरदान।

5

बालकाण्ड (दोहा 152 - 192)

सरोज अग्रवाल

कथा सार

प्रतापभानु प्रसिद्ध कैकय देश का एक प्रतापी राजा था। वह बहुत ही योग्य शासक था। एक बार वह विंध्याचल के घने जंगलों में मृगया के लिए गया और भटक गया। भटकते-भटकते वह एक घने जंगल में जा पहुँचा, जहाँ उसे एक आश्रम दिखाई दिया। उस आश्रम में एक कपटी मुनि था जो प्रतापभानु से हारा हुआ राजा था। उसने राजा को पहचान लिया, किंतु राजा उसे न पहचान सका। कपट मुनि ने राजा को अपने आश्रम में लाकर रात्रि में विश्राम के लिए रोक लिया। उसकी मीठी मीठी बातों ने राजा को मोहित कर लिया। कपटी ने अपना नाम एकतनु बताया। उस कपटी की ज्ञान-ध्यान की बातों से प्रभावित हो राजा ने उसे अपना गुरु मान लिया और बोला, "आपके दर्शन मात्र से ही मुझे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थ प्राप्त हो गए हैं। कोई ऐसा उपाय बताएँ कि वृद्धावस्था और मृत्यु मुझे छू भी न सके।" कपटी मुनि ने कहा - ऐसा ही होगा, किंतु ब्राह्मणों से सतर्क रहना होगा। राजा ने कपट मुनि से ब्राह्मणों को वश में करने का उपाय पूछा। कपटमुनि ने कहा कि तुम एक वर्ष तक ब्राह्मणों को भोजन कराओ, मैं गुप्त रूप से रसोई बनाऊँगा। राजा ने एक लाख ब्राह्मणों को भोज का न्यौता दे दिया। ब्राह्मण आये, भोजन परोसा गया, तुरंत आकाशवाणी हुई –"ब्राह्मणो! भोजन मत करना, इसमें ब्राह्मणों का मांस रांधा गया है।" बस फिर क्या था; ब्राह्मणों ने राजा को सपरिवार राक्षस होने का शाप दे डाला। राजा रसोई घर में गया। वहाँ कुछ न था। इस प्रकार प्रतापभानु के कमज़ोर पड़ जाने से आस-पास के सभी राजाओं ने आक्रमण कर दिया और प्रतापभानु अपने भाई, मंत्री और सेना सहित खेत रहे।

कालांतर में यही प्रतापभानु रावण हुआ, उसका भाई अरिमर्दन कुम्भकरण और सचिव धर्मरुचि विभीषण हुए। यद्यपि ये सब ऋषि पुलस्त्य के पावन कुल में जन्मे, किंतु ब्राह्मण के शाप के कारण उनका विनाश हुआ और फिर राक्षस योनि में जन्म लेना पड़ा। बड़े होने पर तीनों भाइयों ने ब्रह्मा जी की घोर तपस्या की। तपस्या से प्रसन्न हो ब्रह्मा जी द्वारा वरदान माँगने पर रावण ने कहा, "प्रभो! मानव और बंदर के अतिरिक्त मैं किसी अन्य से न मारा जाऊँ।" ब्रह्मा जी ने अब कुम्भकरण से पूछा, उसने छह माह की नींद और एक दिन का जागना माँगा। फिर ब्रह्मा जी विभीषण के पास गए, उसने भगवान के चरण कमल में अपूर्व अनुराग माँगा। ब्रह्मा जी ने तीनों को इच्छित वरदान दिया।

रावण अति शूर, प्रतापी, विद्वान था; किंतु अहंकारी, क्रूर और अत्याचारी भी था। प्रतिदिन उसके अत्याचार बढ़ रहे थे। पृथ्वी उसके अत्याचारों से भयभीत थी। अत: वह गाय का रूप धारण कर देवताओं के पास गई। उसके साथ सभी देवता, यक्ष, मुनि, गंधर्व इत्यादि भी ब्रह्मा जी के पास गए। ब्रह्मा जी ने उनकी व्यथा सुन उन्हें श्रीहरि के पास जाने की सलाह दी। भगवान हरि कहाँ मिलेंगे, इसके लिए शिव ने बताया कि ब्रह्म तो सर्वव्यापी हैं, इसलिए प्रेमपूर्वक याद करने से कहीं भी मिल सकते हैं। सभी मिलकर भगवान् की स्तुति करने लगे। तब आकाशवाणी हुई, "हे मेरे प्रियजन! अपना भय त्याग दो। मैं आप सबकी रक्षा हेतु, अपने अंशों सहित पवित्र रघुवंशी सूर्यकुल में अवतरित होकर आपके कष्टों का निवारण करूँगा। आप निर्भय होकर प्रस्थान करो।" सभी शांत एवं प्रसन्नचित्त हो अपने अपने धाम को लौट गये।

अयोध्या में रघुकुल में दशरथ नामक एक प्रतापी राजा हुए, जो धर्मात्मा व भगवद्भक्त थे। कौशल्या, सुमित्रा और कैकई उनकी तीन रानियाँ थीं। नि:संतान होने के कारण दुखी राजा गुरु वशिष्ठ जी के पास गए। गुरु वशिष्ठ ने शृंगी ऋषि से पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया। यज्ञ की सफलता स्वरूप प्राप्त खीर को ग्रहण करने पर तीनों रानियों ने गर्भ धारण किया और चैत्र मास की शुक्ल पक्षीय नौमी के मनोहर दिन भगवान का अपने तीन अनुजों के साथ अवतरण हुआ। भगवान के प्राकट्य पर आकाश में, देव, मुनि, यक्ष, गंधर्व सभी ने स्तुति की और नगर में उत्सव का वातावरण छा गया। इस प्रकार सभी के कल्याण के लिए भगवान ने अपनी इच्छा से शरीर धारण किया, जो मायाजनित गुणों और इन्द्रियों से परे है।

आध्यात्मिक सार

'लालसा' या कामना ,एवं अति महत्त्वाकाँक्षा मानव को गर्त में ढकेलने वाली होती है। प्रतापभानु अत्यंत प्रतापी व ज्ञानी था; किंतु अमर और अजेय होने की लालसा से वह रावण बन विनष्ट हुआ। मनुष्य अपनी महत्वाकाँक्षाओं के कारण लोभ में पड़कर बुद्धि होते हुए भी विवेक रहित हो जाता है। उसे प्रशंसा और छल में भेद नहीं दिखाई देता। लालसा के वशीभूत हो अनजान व्यक्ति पर विश्वास करना लालच है। लालच जीव के पतन का कारण बनता है। राजा की शक्ति प्रजा के संरक्षण के लिए होती है न कि राज्य विस्तार के लिए। ऐसा विस्तार अधिक शत्रु उत्पन्न करता है। अपने शुभेच्छुओं की बातों का सदा सम्मान करना चाहिए।

जीवन में उपियोगिता

1. मनुष्य को बहुत महत्त्वाकाँक्षी नहीं होना चाहिये।
2. अजर-अमर होने की लालसा में नहीं पड़ना चाहिए।
3. लालच मनुष्य से विवेक हर लेता है, अतः लालच से बचना चाहिए।
4. अकेला पड़ने पर किसी का भी विश्वास नहीं कर लेना चाहिए।
5. प्रसिद्ध व्यक्ति को बहुत लोग पहचानते हैं, किन्तु वह सबको नहीं पहचानता। अतः अनजान व्यक्तियों से मिलते समय अधिक सजग रहना चाहिए।
6. रसोई आदि में अनजान लोगों को नहीं रखना चाहिए।
7. भोजन सदा विश्वासपात्र के हाथों से ग्रहण करना चाहिए।
8. संसार सदा परमार्थ से आगे बढ़ता है, वही मनुष्य का धर्म है और ईश्वर को प्रिय भी।

6

बालकाण्ड (दोहा 192 - 227)

मधु चतुर्वेदी

कथा सार

रामचरितमानस के इस अंश के आरंभ में राम के जन्मोत्सव का वर्णन है। सारे नगर में मंगलगान और नृत्य-उत्सव हो रहे हैं। यह उत्सव हर नागरिक का अपना है। राजा दशरथ की ओर से सबको भरपूर दान दिया जा रहा है। वे भी अपनी दान में मिली भेंटें दूसरों को दे रहे हैं। धरती-स्वर्ग-पाताल, तीनों लोकों से ऋषि–मुनि, यक्ष-देवता-नाग, यहाँ तक कि भगवान शिव और कागभुशुण्ड भी मानव रूप में वहाँ जाने का लोभ-संवरण नही कर पाते हैं और इस आनंद को देखने के लिए अयोध्या पहुँच जाते हैं।

एक बार माँ कौशल्या को राम अपने ब्रह्मरूप का दर्शन कराते हैं। पालने में सोये राम उन्हें पूजा कक्ष में प्रसाद नैवेद्य खाते दीखते हैं, दौड़कर पालने के पास आती हैं तो वहाँ सोये दिखाई देते हैं। भयभीत और भ्रमित माँ कौशल्या को देखकर वे मुस्कराते हैं और अपने ब्रह्मरूप के दर्शन कराते हैं। उस स्वरूप में अनगिनत सूर्य, चन्द्र, शिव, भक्ति-माया, पर्वत, नदियाँ, पृथ्वी, वन, काल, कर्म, गुण,ज्ञान और स्वभाव के दर्शन कराते हैं। माँ कौशल्या घबरा जाती हैं और उनसे बालरूप में आने के लिए कहती हैं। राम मुस्कराकर पुनः उसी रूप में आ जाते हैं।

बालकों के नामकरण करते हुए वशिष्ठ मुनि एक-एक वाक्य में अति सुन्दर व्याख्या करते हैं, "आनंद के समुद्र, सुख की राशि, जिनसे तीनों लोक सुख और शान्ति पाते हैं, वे 'राम' नाम से सार्थक होंगे। संसार का भरण-पोषण करने की क्षमता से संपन्न द्वितीय पुत्र 'भरत' नाम से तथा सभी शुभ लक्षणों से संपन्न, राम के प्रिय और सारे जगत के आधार 'लक्ष्मण' नाम से और जिसके स्मरण मात्र से शत्रु का नाश होता है, वे 'शत्रुघ्न ' के नाम से जाने जायेंगे।" यहाँ नामकरण, जातक संस्कार, चूड़ाकर्म, शुभ कार्यों से पूर्व होने वाला नंदी श्राद्ध सभी संस्कारों का उल्लेख है।

अयोध्या में एक राजकुमार की तरह पल रहे राम के अवतारी स्वरूप का यहाँ से उत्कर्ष प्रारम्भ हो जाता है। विश्वामित्र अयोध्या पहुँचकर वन के हिंसक राक्षसों से अपने यज्ञों की रक्षा के लिए राजा दशरथ से राम–लक्ष्मण को अपने साथ भेजने का आग्रह करते हैं। एक ओर संतानों की सुरक्षा को लेकर चिन्तित पिता राजा दशरथ हैं तो दूसरी ओर अपने लक्ष्य के लिए उत्साही और प्रसन्न राम-लक्ष्मण हैं । गुरु वशिष्ठ और विश्वामित्र दोनों की दृष्टि इस सबसे बहुत आगे देख रही है और वे दशरथ के भय को निर्मूल करते हैं।

विश्वामित्र के आश्रम में राम ताड़का और सुबाहु का वध करते हैं और मारीचि को बिना फल वाले बाण से समुद्र पार फेंक देते हैं। विश्वामित्र राम को अनेक विद्याएँ, अतुलित बल और प्रभावशाली मंत्रपूजित अस्त्र–शस्त्र सौप देते हैं, जिसके बाद सारे वन अभयारण्य हो जाते हैं। इसके पश्चात विश्वामित्र गौतम ऋषि के आश्रम में राम की भेंट अहल्या से करवाते हैं। राम को गौतम द्वारा अहल्या को शाप दिये जाने की बात भी बताते हैं। राम अपने चरणस्पर्श से अहल्या का उद्धार करते हैं। अहल्या राम की वंदना करती हैं। वे उस शाप को भी धन्य मानती हैं, जिसके कारण उन्हें भगवान हरि के साक्षात दर्शन हो गए और उनसे भक्ति का वरदान प्राप्त कर पति लोक को चली गईं।

अहल्या के उद्धार के बाद राम लक्ष्मण ऋषि विश्वामित्र के साथ मिथिला पहुँचते हैं। मिथिला में विश्वामित्र के आने का समाचार पाकर राजा जनक कुलपुरोहित शतानन्द के साथ अगवानी के लिए स्वयं आते हैं। जनक, गुरु विश्वामित्र के चरणों में सर रखकर प्रणाम करते हैं। दोनों राजकुमारों का परिचय प्राप्त करने के लिए राजा जनक व्याकुल हो जाते हैं। दोनों भाइयों की मनोहर छवि को देखकर विदेह यानी जनक अपनी देह की सुधबुध खो बैठते हैं। उन्हें अपने साथ लाकर अपने सर्वश्रेष्ठ महल में ठहराते हैं। राम-लक्ष्मण मिथिला के सौन्दर्य पर विमुग्ध हैं। राम और लक्ष्मण नगर भ्रमण करते हैं। धनुष यज्ञशाला देखने जाते हैं। उनके रूप पर मिथिलावासी मुग्ध हैं और उनमें जानकी के लिए सर्वश्रेष्ठ वर का रूप देखते हैं। इस प्रकार नगर वासियों को आनन्द देते हुए राम लक्ष्मण लौट कर गुरु के पास आते हैं, गुरु की चरणसेवा के पश्चात् रात्रि विश्राम करते हैं।

आध्यात्मिक सार

कौशल्या को अपना विराट रूप दिखाने के साथ ही मनुज-रूप में जन्मे राम के प्रति सभी को यह विश्वास हो गया है कि अयोध्या में मनुज के रूप में भगवान विष्णु ने अवतार लिया है; लेकिन जगत में सारी लीलाएँ वे मनुज के रूप में ही करेंगे।

नामकरण संस्कार के साथ गुरु वशिष्ठ द्वारा उनके नामों की महत्ता के बखान के साथ ही उनके चरित्र-उत्कर्ष की पूरी लीला, मनुज रूप में जन्मे उन सभी भाइयों के इस धरती पर आने के विशेष उद्देश्य सबको दिखने लगते हैं और विश्वामित्र के साथ वन में धरती से दानवीय वृत्तियों के अंत, अभयारण्य वन और सुराज्य की स्थापना के संकेत मिलने लगते हैं। राम के दर्शन को अहल्या हजारों वर्षों की तपस्या का फल और अपने मोक्ष का मार्ग मानती हैं।

सुबाहु, ताड़का अत्याचार का प्रतीक हैं, जिनका अंत और अहल्या का उद्धार ईश्वर के दण्ड और क्षमाशीलता दोनों भावों को प्रकट करता है।

जीवन में उपयोगिता

1. आज के सन्दर्भ में राजा दशरथ और राजा जनक से सबसे महत्वपूर्ण सीखने और समझने वाली बात है - गुरुओं का सम्मान, उनके प्रति विनम्रता और विश्वास।
2. गुरुओं का देशधर्म-राजधर्म भी आज के गुरुओं के लिए अनुकरणीय है। विश्वामित्र राम की शक्तियों को जानते हुए भी, शक्तियाँ सौंपने से पहले उनकी योग्यता की परीक्षा ले लेते हैं।
3. गुरु-शिष्य के बीच ज्ञान देने और लेने वाले में समान पात्रता है। शिष्य राम-लक्ष्मण में वैसा ही समर्पण भाव है। यदि आज ऐसे शिष्य चाहिए तो गुरुओं को पहले अपने को वशिष्ठ और विश्वामित्र जितना उठाना होगा।
4. साहित्यिक दृष्टि से सीखने की बात है - 'तुलसी दास की बड़ी से बड़ी बात को कम शब्दों में कहने की कला'। बड़े समझे जाने वाले प्रसंगों को बारीकी से स्पर्श करते हुए वे आगे बढ़ जाते हैं। कवि का ध्येय तो राम के चरित्र को उत्कर्ष देना है।
5. उद्दंड को दण्ड से ही सुधारा जा सकता, किन्तु असहाय के लिए संवेदनशील होना चाहिये।

7

बालकाण्ड (दोहा 227 - 267)

मधु चतुर्वेदी

कथा सार

रामचरितमानस के इस पारायण में राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ मिथिला पहुँच गए हैं। राम को देखकर और उनका परिचय प्राप्त करके जनक के मन में जानकी के लिए सुयोग्य वर के रूप में उन्हें पाने की उत्कंठा जागती है। इधर गौरी पूजन के लिए जाते समय सखियाँ जानकी को दोनों भाइयों के चुपचाप दर्शन करा देती हैं। उधर उपवन में लक्ष्मण के साथ घूमते हुए राम सीता की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखते हैं; लेकिन उनके कंगन, पायजेब और करधनी की ध्वनि मात्र का अनुसरण करते हुए कनखियों से जानकी की झलक देखने का सुख पा लेते हैं। जानकी राम को पति के रूप में पाने के लिए बार-बार गौरी पूजा करती हैं। सारी मिथिला नगरी राम-लक्ष्मण को देखने के लिए उमड़ पड़ती है। जानकी और सारी रानियाँ ही नहीं, समस्त नगरी धनुष तोड़ने की शर्त के लिए महाराजा को कोस रही है। सुकुमार राजकुमारों द्वारा उस धनुष को तोड़कर सीता से विवाह कर पाना असंभव-सा लगता है।

इस प्रसंग में सीता के सौन्दर्य का बहुत मर्यादित वर्णन है. गोस्वामी जी को सभी उपमाएँ सीता के सौन्दर्य की तुलना के लिए क्षीण-हीन लगती हैं; किन्तु जब विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण स्वयंवर सभा में पहुँचते हैं तो उनके सौन्दर्य का वर्णन वे जी भर कर करते हैं। उन्हें देखकर लोग पलकें झपकाना ही भूल गए। वे ऐसे लगते हैं मानों बादलों के बीच से दो चन्द्रमा निकल आये हों, उनके सर से लेकर मस्तक, कान, भृकुटि, बाल ,नेत्र, ठोड़ी, नासिका, कपोल, शंख के सदृश गर्दन, छोटे हाथी की सूंड के समान भुजाएँ, सिंह की सी पतली लचीली कमर है। सबसे रोचक बात है; उस अनुपम सौन्दर्य को वहाँ उपस्थित हर व्यक्ति अपने भाव से देखता है।

स्वयंवर सभा में राजाओं का हाल देखकर जनक हताश हैं, रानियाँ दुखी हैं , सीता के मन में भी पिता के प्रण की कठोरता पर सोच और चिन्ता है। सभी इस प्रतिज्ञा को लेकर जनक के विरुद्ध कुछ न बोल पाने को विवश हैं। सीता की दशा देखकर राम भी व्याकुल हैं, उन्हें सीता की विकलता समझ में आ रही है, सीता के प्राण खोने के भय पर भी उनकी मर्यादा उन्हें कुछ भी करने की आज्ञा नहीं देती।

जब कोई धनुष उठा नहीं पाता, हताश राजा जनक द्वारा यह कहने पर कि "धरा वीर-विहीन हो गई है।" लक्ष्मण क्रोध में भरकर कहते हैं, "मैं ब्रह्माण्ड को गेंद की तरह उठा लूँ, सुमेरु पर्वत को मूली की तरह तोड़ दूँ, ये धनुष क्या चीज है।" राम मुस्कराकर लक्ष्मण को शान्त कर पास बिठाते हैं; लेकिन विश्वामित्र सहित सभी मुनि प्रसन्न हो जाते हैं कि अब सही समय आ गया है कि राम चुनौती स्वीकार करें। विश्वामित्र की आज्ञा से राम धनुष को कमलनाल की तरह तोड़ देते हैं। सब देवता जयजयकार करते हैं। सीता को पाने के अभिलाषी देव, दानव, दैत्य, महीप, मानव सब हताश होकर आक्रोश-विरोध करते हुए लौट जाते हैं।

आध्यात्मिक सार

राम और सीता विष्णु और लक्ष्मी के अवतार हैं। धरती पर उनका स्वयंवर अलौकिक जगत के लौकिक आयोजन की लीला है, जिसे देखने के लिए देव-दानव सभी लालायित हैं। जानकी ने वर के रूप में राम को पाने के लिए गौरी का आह्वान किया है, धनुष तोड़ने के लिए शिव का आशीर्वाद प्राप्त किया है। तुलसीदास के लिये जगत की सारी उपमाएँ जानकी के सौन्दर्य के आगे तुच्छ हैं, वे तो लौकिक जगत की स्त्रियों को दी जाती हैं। काया की उपमाएँ त्रिगुणात्मक, मायिक जगत से ली गई हैं, उन्हें जानकी के अप्राकृत, सौन्दर्य के लिए प्रयुक्त करना अपर्याप्त है। मानव के जीवन के नवरस भी उस सौन्दर्य और आनंद को व्यक्त करने में अपर्याप्त हो जाते हैं। यहाँ तुलसी ने साहित्य के नौ रसों को राम के अन्दर देखा है। जनक, संबंधियों आत्मीयजन व रानियों के मन में वात्सल्य भाव है। मिथिला में पुरवासियों और सखियों के लिए वे शृंगार की मूरत हैं, तो कुटिल नृपों के लिए प्रतिद्वंद्विता के भय में विकराल व भयानक हैं। सीता को पाने के लिए आतुर व हताश लोगों में रौद्र भाव है तो लक्ष्मण में उनके वीर और रौद्र रूप का अभिमान है। विद्वानों और योगियों को उनका विराट रुप दिखाई दे रहा है, उनके लिए वे शान्त-शुद्ध मन और स्वतः प्रकाशमान होने वाले परम भाव हैं तो हरिभक्तों में अपने इष्टदेव के लिए भक्ति रस धारा प्रवाहित होती है। जिसे उनका जो रूप भाया, उसने उन्हें उसी भाव से देखा।

राजाओं के घमण्ड से धनुष का भारी होते जाना इस बात का प्रतीक है कि अहंकार से कार्य सिद्ध नहीं होते। राम का गुरु की आज्ञा से धनुष उठाना और उनका विनम्र भाव ही धनुष के लचीलेपन का द्योतक है। अकड़ मनुष्य को 'पराजय' और विनम्रता 'जय' प्रदान करवाती है। धनुष यज्ञशाला सीता के वर का चयन है न कि युद्धभूमि। यहाँ सीता अर्थात् प्राकृतिक शक्ति का वरण विनम्रता से संभव है। अकड़, घमण्ड, प्राप्ति की कामना रखने वालों को पराजय का मुख देखना पड़ता है। प्रकृति रूपी शक्ति कभी उसकी सहायिका, सहचरी नहीं हो सकती।

जीवन में उपयोगिता

1. इस पाठ में सर्वाधिक समझने की बात यह है कि इसमें मर्यादा का निर्वहन अद्भुत है।
2. जीवन में परस्पर सम्मान और हर परिस्थिति में संयम यहाँ सीखने की बात है। राजा जनक, कुलगुरु शतानंद और मुनि विश्वामित्र के बीच सम्मान की मर्यादा है। विश्वामित्र जानकी के पिता के हताश उद्बोधन, सीता की आँखों में राम के लिए निमंत्रण और उस क्षण की प्रतीक्षा के बाद ही राम को स्वयंवर में भाग लेने के लिए कहते हैं। जानकी को पाने के लिए उत्कंठित होते हुए भी राम, आज्ञा पाकर ही स्वयंवर के लिए आगे बढ़कर धनुष तोड़ते हैं।
3. राम और जानकी के बीच प्रेम की मर्यादा और दृढ़ता सीखने योग्य है। बिना एक शब्द भी बोले दोनों ने अपने अंदर उपजे प्रेम और स्वयंवर में पाने की दृढ़ता को व्यक्त कर दिया है।
4. युवकों को अपनी इच्छा और निर्णय गुरुजन की आज्ञा और आशीर्वाद से ही फलीभूत करने चाहिए।
5. अनेक अहंकारी मिलकर वह काम नहीं कर सकते जो एक विनम्र स्वभाव वाला व्यक्ति कर सकता है।

8

बालकाण्ड (दोहा 267 - 318)

राकेश कुमार चौबे

कथा सार

राजा जनक अपनी पुत्री सीता के विवाह के लिए स्वयंवर रचते हैं और अयोध्या के राजकुमार राम उस स्वयंवर में धनुष भंग करते हैं। असंतुष्ट, आत्मकुंठित, पराजित राजा विरोध के स्वर को प्रकट करते हैं, जो लक्ष्मण को आक्रोशित करते हैं। उसी समय भगवान परशुराम, जिन्हें विष्णु का छठा अवतार माना जाता है, शिव के 'पिनाक' धनुष के भंग होने की सूचना से यज्ञशाला में आते हैं। उनकी वेश-भूषा तो ऋषि-मुनि की भाँति शांत है, किन्तु उन्होंने साथ में अस्त्र-शस्त्र भी रखे हैं।

विश्वामित्र की परशुराम से भेंट होती है। परशुराम ने दोनों भाइयों को भी आशीर्वाद दिया। वे उनके तेज से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाये। प्रभु राम ने स्थिति को भाँप कर कहा -"हे नाथ! धनुष को भंग करने वाला आपका ही कोई दास होगा।" इस पर मुनि क्रोधित होकर कहते हैं - हे राम! वह जो भी है, सहस्रबाहु के समान मेरा शत्रु है। परशुराम क्रोधित हो लक्ष्मण को कुठार दिखाते हैं, जिस पर लक्ष्मण कहते हैं - "मुनि आप तो फूँक से पहाड़ उड़ाने की चेष्टा कर रहे हैं, यहाँ कोई कुम्हड़े के नवजात फल नहीं हैं, जो आपकी तर्जनी से कुम्हला जायेंगे।" लक्ष्मण और परशुराम के बीच तीखी नोक-झोंक होने लगती है। लक्ष्मण तो इतना तक कह देते हैं कि "प्रभु! आपने अपने मुँह से अपनी इतनी प्रशंसा कर दी है कि किसी दूसरे को और प्रशंसा करने की क्या आवश्यकता है?" गुस्से में परशुराम अपना कुठार ले कर लक्ष्मण की तरफ बढ़ते हैं। तब विश्वामित्र, जनक और राम स्वयं कहते हैं, "मुनिवर! बालकों के गुण-दोष पर साधु लोग ध्यान नहीं देते, क्षमा करें।" लक्ष्मण के चुप हो जाने पर परशुराम राम पर बरस पड़ते हैं। राम ने अपनी छवि के अनुरूप सौम्य भाषा में परशुराम को समझाया और कहा, "हे मुनि श्रेष्ठ! मैं तो राम हूँ, आप तो परशुराम हैं; आप हर तरीके से बड़े हैं। हे ब्राह्मण देवता! हमारे वंश में ब्राह्मणों का आदर और रक्षा करने की परम्परा है।" परशुराम इसके बाद भी समझ नहीं पाते हैं, तब राम कहते हैं, "हे मुनि! मैं आपको बता दूँ कि, मेरा रघुवंश 'काल' से भी नहीं डरता; परन्तु ब्राह्मण वंश की यह प्रभुता है कि जो आपसे डरता है, वह सबसे निर्भय हो जाता है अथवा जो भयरहित होता है वह भी आप से डरता है।" प्रभु के रहस्यपूर्ण वचन सुनकर परशुराम की आँखें खुल जाती हैं। इस प्रकार वे प्रभु को पहचान जाते हैं और राम व लक्ष्मण से बार-बार क्षमा माँग कर अपने धाम को वापस चले जाते हैं।

सारी परिस्थितियाँ सामान्य देख जनक प्रसन्नता पूर्वक महर्षि विश्वामित्र से राम और सीता के विवाह के विषय में पूछते हैं कि अब आगे क्या करना है। विश्वामित्र कहते हैं - "हे राजन! आपके कुल में जैसा व्यवहार होता है, ब्राह्मणों, वृद्धों और गुरुओं से पूछकर वेदोक्त आचार करें।" तब राजा जनक यज्ञशाला की पूरी घटना को विस्तार से पत्र द्वारा सूचित करते हुए महाराजा दशरथ के पास दूत भेजकर विवाह हेतु निमंत्रण भेजते हैं.

उधर, राजा दशरथ के पास जनक के दूत पहुँचते हैं। वे दरबार में राजा जनक का पत्र राजा दशरथ को देते हैं। दशरथ उसे लेकर स्वयं पढ़ते हैं। वे पुलकित मन से सभा को राम के विवाह की सूचना देते हैं। राजकुमार भरत, शत्रुघ्न समाचार सुनकर प्रसन्नता से फूले नहीं समा रहे हैं। माताएँ स्वभाववश दान धर्म में लग जाती हैं और प्रसन्नता से विवाह

की तैयारी में जुट जाती हैं। पिता पूछते हैं, “मेरे दोनों पुत्र कैसे हैं?" तब दूत हँस के कहते हैं, “महाराज क्या सूरज को देखने के लिए 'दीये' की आवश्यकता होती है? आपके दोनों पुत्र आपकी शान और विश्व के विभूषण हैं।”

दशरथ अपने मंत्रियों को बुलाकर बारात सजाने का आदेश देते हैं। बारात के प्रस्थान और राजा जनक द्वारा बारातियों का रास्ते में स्वागत अद्भुत है। सारे नगरवासी यही कह रहे हैं - दूल्हा-दुल्हन सुन्दरता की पराकाष्ठा हैं, वहीं दोनों समधी पुण्य की सीमा। विवाह ऋतुराज 'हेमंत'और सम्पन्नता के माह 'अगहन' में होगा तथा ग्रह, तिथि, नक्षत्र, योग एवं वार सभी श्रेष्ठ होंगे। गोधूलि बेला में विवाह संपन्न होगा। इस प्रकार जनक के कुलगुरु शतानंद और रघुवंश के कुलगुरु वशिष्ठ ने सभी को शुभ मुहूर्त में विवाह हेतु तैयार रहने के निर्देश दिए। शिवजी देवताओं से कहते है - महामहिमामयी निजशक्ति माता सीता और अखिल ब्रह्मांड के परम ईश्वर साक्षात भगवान श्रीराम का विवाह हो रहा है, इसमें आश्चर्य कैसा! सभी देवी-देवता प्रभु के विवाह में वेष बदलकर उपस्थित होते हैं। लक्ष्मी, पार्वती, सरस्वती और इन्द्र की पत्नी शचि जो स्वभाव से ही पवित्र और देवांगनाएँ थीं, वेश बदलकर रनिवास में जा मिलीं और मंगलगान करने लगीं। राम को सुन्दर शृंगार और दूल्हे के वेश में देखकर माँ सुनयना अपने स्वप्न को सच होते देख रहीं हैं और बेटी सीता मनोवांछित पति पाकर अति आनंद में हैं।

आध्यात्मिक सार

ब्राह्मण और क्षत्रिय के धर्म और आचरण को समझना चाहिए। वेशभूषा से अधिक स्वभाव और आचरण महत्वपूर्ण है। दोनों का ही उद्देश्य सबकी सुरक्षा और पालन करना है। ये बुद्धि और बल के प्रतीक हैं। दोनों का सामंजस्य विश्व के लिए कल्याणकारी होता है। क्रोध से बल और तेज घटता है। सामने वाले का क्रोध बढ़ाकर उसका बल क्षीण किया जा सकता है। जब अगला अवतार प्रकट हो जाय तो पहले वाले का कर्त्तव्य पूर्ण हुआ जानना चाहिए।

जीवन में उपयोगिता

1. इस प्रसंग में सन्देश है कि नवयुवकों को अपने जीवन-साथी को चुनने का अधिकार है; परन्तु उसकी परिणति कुल व समाज के रीति-रिवाजों के साथ-साथ घर के सम्माननीय व्यक्तियों को विश्वास में लेकर करनी चाहिए।
2. अपना गुणगान स्वयं नहीं करना चाहिए।
3. यदि भावी पीढ़ी सक्षम और समर्थ है तो पुरानी पीढ़ी को उसे अपना सहयोग प्रदान करना चाहिए। उसके हाथ में अपना बल सौंप कर स्वयं सांसारिकता से विदा ले लेनी चाहिए।
4. युवाओं को अपना उत्तरदायित्व समझना चाहिए। उन्हें बड़ों का सम्मान व आज्ञा पालन करना चाहिए; साथ ही उनका मार्गदर्शन भी लेना चाहिए।
5. विवाह जैसे संबंधों में गुण, शील, स्वभाव, विनम्रता महत्वपूर्ण है न कि शारीरिक बल।
6. अहंकारी व्यक्ति से कभी भी अपनी कन्या का विवाह नहीं होने देना चाहिए।

9

बालकाण्ड (दोहा 318 - 361)

राकेश कुमार चौबे

कथा सार

इस प्रसंग में सीता-स्वयंवर के बाद राम से उनके विवाह का वर्णन है। इस विवाह में वैदिक रीति के साथ-साथ परिवार और कुल के रीति-रिवाज शामिल हैं। सीता की माता सुनयना सभी को सम्मान देते हुए अपने जामाता का स्वागत पलक-पाँवड़े बिछाकर कर रही हैं। राम को परछने के बाद वे ससम्मान उन्हें मंडप में ले आती हैं। इधर राजा दशरथ अपने सगे–सम्बंधियों, रिश्तेदारों और मित्रों के साथ पूर्ण वैभव और गौरव के साथ मंडप में पधारते हैं। सारे देवी-देवता मनुष्य-रूप धारणकर विवाह-मंडप में उपस्थित हैं। देवताओं सहित सभी नगरवासी इस अद्भुत विवाह में शामिल होकर अपने आप को धन्य समझ रहे हैं। प्रभु की बारात में सभी देवी-देवता वेष बदल कर उपस्थित हुए, जिन्हें उनके अतिरिक्त कोई नहीं पहचान पा रहा था। इसलिए राम ने उन सभी की मानसिक पूजा कर उचित स्थान दिया। सीता अपनी सखियों के साथ मंडप में पधारीं। गुरुओं ने रीति-रिवाज, व्यवहार और कुलाचार किये।

प्रथम पूज्य गणेश के साथ महादेव और माता पार्वती की पूजा के बाद विवाह प्रारंभ हुआ। अब पाँव पखराई की रस्म हो रही है। जिन चरणकमलों के दर्शन को लोग तरसते हैं, आज उनको पखार कर वधू के माता-पिता प्रसन्न हैं और मन ही मन सोचते हैं कि जिस चरण-रज से अहल्या का उद्धार हुआ, उससे आज हमारा भी उद्धार होगा। इसके बाद पाणिग्रहण संस्कार, माता द्वारा पुत्री को सौंपना व गठबंधन की रस्में संपन्न हुईं। फिर भाँवर की रस्म हुई, राम माता सीता की माँग में सिन्दूर भरते हैं। आज यहाँ राम-सीता के विवाह के साथ भरत का मांडवी से, लक्ष्मण का उर्मिला से और शत्रुघ्न का श्रुतिकीर्ति से विवाह भी उसी रीति-रिवाज से संपन्न हो रहा है, जिस प्रकार राम-सीता का संपन्न हुआ। चारों जोड़े मंडप में बैठे हैं। सभी उन्हें देख-देख कर आनंद और उत्साह में हैं। दूल्हा-दुल्हन को कोहबर में पूजा के लिए ले जाया जाता है, जहाँ कुलदेवता से वर-वधू को आशीर्वाद दिलाया जाता है। विवाह की रस्मों के सम्पन्न होने पर सभी देवगण अपने अपने धाम को चले जाते हैं। चारों वर-वधु पिता से आशीर्वाद लेने के बाद भोजन के लिए जाते हैं। राजा दशरथ ने भी सभी ऋषि-मुनियों का सम्मान किया, जिनके आशीर्वाद और शुभकामनाओं से यह शुभ विवाह संपन्न हुआ। बारात की विदाई की तैयारी प्रारंभ हो गई है, रानियाँ अपनी पुत्रियों को पत्नी-धर्म, बहू-धर्म के साथ स्त्री-धर्म की शिक्षा देती हैं। माता सुनयना राम से कहती हैं - आप तो गुणों की खान हैं, आप भक्तों के गुणों को ग्रहण कर दोषों का नाश करने वाले हैं, उसी प्रकार आप मेरी पुत्री को स्वीकार कीजिए। चारों भाई माताओं से आशीर्वाद लेकर विदा की तैयारी में लग जाते हैं। राजा जनक ससम्मान सभी की विदाई करते हैं।

बारात के आगमन का समाचार सुनकर अयोध्या में खुशी का कोई ठिकाना नहीं हैं। माताओं की खुशी की तो कोई सीमा ही नहीं है। वे दान-पुण्य में लग गईं हैं और गणेश के साथ माता पार्वती और शिवजी को बार-बार धन्यवाद देती हैं। माताएँ वर-वधू के स्वागत की तैयारी में लगी हैं। चारों भाई नव-वधुओं के साथ राजद्वार पर आ गए हैं, माताएँ पुत्र और पुत्र-वधुओं को देखकर प्रसन्न हैं, उनकी खुशी की सीमा नहीं है। वेद और कुलरीति से वधुओं को राज महल में ले आती हैं। ऋषि-मुनियों के साथ राजा दशरथ के आगमन की खबर सुन सभी रानियाँ उनके स्वागत के लिए आती हैं, उनका यथोचित स्वागत करती हैं और उनको उचित आसन देती हैं। राजा ने रानियों को बुलाकर कहा - लड़के थक

गए हैं, उन्हें नींद आ रही है, उनको शयन कराओ। माताओं को जैसे मनोवाँछित कार्य मिल गया हो, सभी को राम और लक्ष्मण से बहुत सारी बातें जो करनी थीं। राम! तुमने इतने कोमल शरीर से इन दुष्ट राक्षसों और प्रतापी राजाओं को कैसे पराजित किया? दुष्ट मारीच व सुबाहु जैसे भयानक राक्षसों से तुम्हें डर नहीं लगा? तुम्हें ऋषि-मुनि की शिक्षा और ईश्वर कृपा तो मिली पर शिव के धनुष को कैसे तोड़ दिया, यह तो बताओ। राम! यह कोई साधारण मनुष्य का काम तो हो नहीं सकता। राम मुस्कराते हुए अपनी सभी माताओं को संतुष्ट करते हैं। सुबह पुन: दरबार में सभी एकत्रित होते हैं, वशिष्ठ व विश्वामित्र का यशोगान करते हैं, जिसे देखकर राम और लक्ष्मण बड़े प्रसन्न होते हैं।

महाकवि तुलसीदास कहते हैं - मैंने राम और उनके कुल की यश-प्रशंसा अपनी बुद्धि के अनुसार की है, जो मुझे कम ही लग रही है; परन्तु फिर भी यदि वर-वधु में वर्णित संस्कार और उनके माता-पिता के मध्य आपस में एक दूसरे के प्रति इतना सम्मान और विश्वास हो, तब ही विवाह-सम्बन्ध सार्थक होता है और जीवन में स्वाभाविक रूप में स्वर्ग की अनुभूति होती है।

आध्यात्मिक सार

राम-सीता विवाह के माध्यम से तुलसीदास जी ने यह कहकर "जीव की चार अवस्थायें (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय)अपने अपने स्वामियों (विश्व, तैजस, प्राज्ञ और ब्रह्मा) के साथ विराजमान हैं", बहुत कुछ कह दिया है। मंडप इस संसार का प्रतीक है। यह बालकाण्ड का चरम भाग है। चार अंश, चार पुरुषार्थ, चार प्रकार की मुक्ति और उनके चार मार्ग इन सभी गूढ़ रहस्यों का वर्णन है। तुलसीदास बहुत सहज ढंग से योग विद्या को समझाते हैं।

आनंद उत्सव में सम्मिलित सभी जन देवी देवताओं के समान होते हैं। उनका आदर सत्कार समान रूप से करना चाहिए। मंगल कार्य को हर्षोल्लास के साथ करना जीवन में सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है।

जीवन में उपयोगिता

1. विवाह जैसे महत्वपूर्ण संस्कार में एक मुखिया होना चाहिए, जो विधि-विधान और लोकाचार के साथ विवाह संपन्न कराए।
2. सम्मान में दान, विनय, प्रशंसा और कोमल वाणी शामिल हो।
3. वर वधू पक्ष को एक दूसरे के मान सम्मान का पूरा ध्यान रखना चाहिए।
4. अपने आनन्द उत्सव में सभी को सम्मिलित करना चाहिए।
5. जी खोलकर दान, भेंट देनी चाहिए।
6. मिले हुए उपहारों का लालच नहीं करना चाहिए, उन्हें और लोगों में बाँट देना चाहिए।
7. वधुओं को स्नेह, लाड़ दुलार से रखना चाहिए।
8. बड़ों के सामने अपने प्रेम का अनावश्यक प्रदर्शन नहीं करना चाहिए।
9. सदा मर्यादा और गरिमा का पालन करना चाहिए।

10

अयोध्याकाण्ड (आरंभ - दोहा 39)

विनय शर्मा

कथा सार

विवाह उपरान्त रघुकुल-तिलक राम सीता को लेकर अयोध्या आए हैं। जिनका नाम ही मंगलकारी है, उनके विवाह का उत्सव कैसा होगा! चारों तरफ से समृद्धि एवं सुख अयोध्या आ गए हैं। महादेव का स्मरण करके हर व्यक्ति यही प्रार्थना कर रहा है कि अब राम ही राज्य सँभाले।

राजा दशरथ जब अपने आप को शीशे में देख रहे हैं तो बालों की सफेदी उन्हें संकेत देती है कि अब उन्हें पुत्र को राज्य सौंप देना चाहिए। इस विचार के प्रगाढ़ होते ही आज्ञा लेने के लिए राजा गुरु के पास जाते हैं। गुरु प्रसन्न होकर बताते हैं कि इस शुभ कार्य के लिए समय देखने की आवश्यकता नहीं है। राजा लौटकर मंत्रियों को समाचार सुनाते हैं। उधर राम को शुभ शगुन प्रतीत हो रहे हैं, जिनके बारे में वे सोचते हैं कि ये भरत के आने के सूचक हैं। राजा दशरथ के गुरु से निवेदन करने पर कि वे राम को शिक्षा दें; गुरू स्वयं राम के महल जाते हैं। राम वंदना करते हुए कहते हैं कि यदि आपने मुझे बुला लिया होता तो मैं तुरंत दौड़ा चला आता। गुरुदेव राजा दशरथ का मनोरथ बताकर राम को संयम और व्रत का आदेश देते हैं। राम, जो एक अत्यंत प्रेमी स्वभाव के बड़े भाई भी हैं, इस सोच में पड़ जाते हैं कि बड़ा पुत्र होने के नाते राज्य सिर्फ मुझे मिले, क्या यह उचित है? राम मर्यादापुरुषोत्तम हैं और उनका जीवन-वर्णन प्रत्येक संबंध और रिश्ते की गरिमा व सुंदरता का भी बखान है।

इधर देवता व्यथित हो जाते हैं। उन्हें लगता है कि प्रभु का राज्याभिषेक होने के पश्चात रावण आदि राक्षसों से उन्हें छुटकारा नहीं मिलेगा। वे माता सरस्वती की वंदना करते हैं और कहते हैं कि किसी भी प्रकार से ये जो कुछ भी हो रहा है, उसे बदलने का प्रयास करें। माता सरस्वती व्यथित हैं कि इस शुभ दिन को रोकने के लिए देवता उनसे आग्रह कर रहे हैं। वे देवताओं की विनती को मानकर रानी कैकेयी की दासी मंथरा की बुद्धि बदल देती हैं। मंथरा रानी कैकई की मनोदशा और मानसिक दृष्टिकोण को बदल देती है। जैसे ही रानी कैकई को सब कुछ अलग दिखने लगता है, उसी समय जो वरदान राजा ने उनके मंगल के लिए उन्हें दिए थे, वही वरदान मंथरा उनके हाथ में हथियार के स्वरूप दे देती है। रानी कोपभवन में चली जाती हैं।

राजा रानी से मिलने के लिए उनके महल में पहुँचते हैं। वहाँ उन्हें सूचना मिलती है कि रानी कोपभवन में हैं। सम्राट घबरा जाते हैं, वहाँ पहुँचकर कारण पूछते हैं और आश्वासन देते हैं कि उनके रहते कोई भी उन्हें दुःख नहीं दे सकता। रानी उन्हें उनके दिए हुए वरदानों का स्मरण करवाती हैं। भरत के लिए राज्य और राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास माँगती हैं। दशरथ समझ जाते हैं कि यह काल का परिणाम है और काल के रूप में ही इसका अंत होगा। वे व्याकुल होकर राम-राम कहकर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं; क्योंकि प्रभु का नाम ही अंतिम सहारा है। सुबह हो जाती है, मंत्री सुमंत्र राजा दशरथ के पास पहुँचते हैं और समझ जाते हैं कि कुछ अनहोनी हो गई है। रानी उनसे कहती हैं कि आप जाकर राम को बुला लाएँ। वहाँ की स्थिति देखकर राम असमंजस में पड़ जाते हैं।

आध्यात्मिक सार

यहाँ यह आवश्यक है कि हमें मंगल और अमंगल की संभावनाओं का ज्ञान हो। स्मरण रहे कि ईश्वर का नाम ही मंगल है। इस नाम से मंगल सूचनाएँ होती हैं और शुभ दिन उत्पन्न होते हैं। गोस्वामी जी ने उस समय का वर्णन करते हुए जो चित्र प्रस्तुत किया है, यदि हम उन संकेतों को अपने आसपास ढूँढें तो शुभता से हमारा जुड़ाव बढ़ता है। आवश्यक है कि हमें भावना और प्रक्रिया दोनों के जुड़े होने का आभास रहे। भावना की कमी से प्रक्रियाओं में कमी महसूस होती है और प्रक्रियाओं के पूरा होने पर ध्यान देने से भावना जाग्रत रहती है। भगवान स्वयं ही शिष्य के रूप में क्यों न हों, गुरु का महत्त्व समझने की आवश्यकता है। आँखों पर जब अहंकार और क्रोध का पर्दा पड़ जाता है तब मन की लालसा सबसे बड़ी दिखने लगती है। अंतर्विरोध बाह्यविरोध के रूप में स्थापित हो जाता है और उस घड़ी में शब्द अपशब्द हो जाते हैं।

जीवन में उपयोगिता

1. राजा दशरथ चक्रवर्ती राजा होने के बाद भी स्वयं के निर्णयों में गुरु से आज्ञा लेते हैं। यहाँ आशीर्वाद की महिमा का वर्णन है। यहाँ एक राजा अपने अधिकारों को जानता है; लेकिन मंत्रियों के अधिकारों की रक्षा करता है। ये शिक्षाएँ जो गुरु को महत्त्व देने से लेकर मंत्रणा और मंत्रियों को महत्त्व देने तक जुड़ी हुई हैं; व्यक्ति विशेष के जीवन में पालन करने योग्य हैं। हमें कभी न कभी जीवन में निर्णायक होना होता है, उस समय ईश्वर का नाम लेकर गुरु की आज्ञा से और शुभचिंतकों की मंत्रणा से किया कार्य ही अच्छा होता है।
2. गुरु का आशीर्वाद शिष्य की भावना और आचरण में ही दिखाई देता है। यह मार्ग होने के साथ-साथ सुरक्षा-कवच और आशीर्वाद भी है।
3. अयोध्याकाण्ड संबंधों, रिश्तों और उनसे जुड़ी भावनाओं की तरफ हमारा ध्यान आकर्षित करता है। गोस्वामीजी ने लिखा है:- 'प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई। हरउ भगत मन कै कुटिलाई।' प्रभु का यह प्रेमपूर्ण सुंदर पछतावा भक्तों के मन की कुटिलता का हरण करे।
4. मन और बुद्धि ईश्वर के नाम के अधीन है। यदि उनका नाम स्मरण में रहे तो सोच पलटती नहीं है। कभी-कभी लोग नाम-स्मरण का समय निर्धारित कर लेते हैं; परन्तु नाम जपना कभी भी असमय नहीं होता।
5. जब अविश्वास उत्पन्न होता है तब वह व्यक्ति जिससे हमारा कल्याण हो सकता है, उसे हम अपने ही विपरीत प्रयोग में लाने के लिए तैयार हो जाते हैं। कई ऐसे वैज्ञानिक प्रयोग हुए हैं, जिनका मानवता ने गलत उपयोग किया है और फिर सारी मानवता को उसके परिणाम भोगने पड़े हैं।
6. अब भी उसी व्यक्ति को राजा बनाने का निर्णय लेना चाहिए, जिसे जनता/प्रजा चाहती है, यह रघुकुल में प्रजातंत्र का प्रभाव है। प्रजा के साथ-साथ गुरु और मंत्रियों का मत भी महत्वपूर्ण होता है।

11

अयोध्याकाण्ड (दोहा 39 - 82)

विनय शर्मा

कथा सार

राम माता कैकेयी से पिता के दुःख का कारण पूछते हैं। राम कहते हैं - माँ! वह पुत्र बड़भागी है, जो पिता-माता के वचनों का अनुरागी है। दुःख है कि पिताजी इतनी छोटी सी बात के लिए व्याकुल हुए। दशरथ राम को गले लगा लेते हैं। राम कहते हैं, कि आप प्रसन्न होकर मुझे आज्ञा दीजिए। इस पृथ्वी पर उसका जन्म धन्य है जिसके चरित्र की प्रशंसा सुनकर माता-पिता को आनन्द हो। जिसको माता-पिता प्राणों के समान प्रिय हैं; अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष उसकी मुट्ठी में हैं।

सारा नगर व्याकुल हो जाता है। रानी कैकई की भर-भर निंदा हो रही है। राम माता कौशल्या के पास जाकर आज्ञा माँगते हैं। सीता को जब यह पता चलता है तो वे सास के चरणों में जाकर बैठ जाती हैं और उनसे पति के साथ वन जाने की आज्ञा माँगती हैं। माँ राम से कहती हैं कि सीता कोमल हैं। कभी कठोर पृथ्वी पर पैर नहीं रखा, वो वन में किस तरह से रह पाएँगी? राम जानकी को समझाते हैं। उनके वचन सुनकर वे व्याकुल हो सास के पैरों में पड़ कर कहती हैं कि प्रभु मुझे वह शिक्षा दे रहे हैं, जिससे मेरा हित हो; परंतु मेरा मन यह कहता है कि पति के वियोग के समान जगत में कोई दुःख नहीं है। जितना विपरीत चित्रण राम ने वन के विषय में किया उसका उतना ही सुंदर चित्रण उनके साथ होने की वजह से करती हैं। वो दुखों को सुखों में बदल देती हैं।

लक्ष्मण राम के वन जाने का समाचार पाते ही दौड़ पड़ते हैं, नेत्रों में आँसू हैं, राम के चरण पकड़ लेते हैं। वे अपने स्वामी को दुविधा में नहीं डाल रहे हैं। राम कहते हैं कि भरत और शत्रुघ्न घर पर नहीं हैं, ऐसे में तुम्हारे वन चलने से अयोध्या सूनी हो जाएगी। लक्ष्मण इस प्रकार से अपनी बात कहते हैं कि राम उन्हें हृदय से लगा लेते हैं और कहते हैं कि जाकर माता से विदा ले आओ और मेरे साथ वन को चलो। माता सुमित्रा शिक्षा देती हैं कि जानकी ही तुम्हारी माता और राम ही तुम्हारे पिता हैं।

राम, लक्ष्मण और सीता महाराज दशरथ के पास जाते हैं। वे उनसे आशीर्वाद माँग रहे हैं। राम सबको दान, आदर और मान देते हैं। मित्रों के प्रति प्रेम दर्शाते हैं और दास दासियों को गुरु को सौंपकर बार-बार सभी से कहते हैं कि मेरे माता-पिता को दुखी मत होने दीजिएगा। शीश नवाकर गणेश, पार्वती और कैलाशपति महादेव का नाम लेकर रघुनाथ वन को चल पड़ते हैं। उधर लंका में बुरे शकुन होने लगे हैं। अयोध्या में शोक छा गया है और देवलोक में हर्ष है।

राजा सुमंत्र को बुलाकर कहते हैं कि आप राम के साथ वन को जाइए। उन को रथ में बैठाकर, वन दिखलाकर, चार दिन बाद लौटा लाइए; यदि वे ना लौटें तो सीता से लौट आने की प्रार्थना कीजिएगा, अन्यथा मेरा जीवन छूट जाएगा।

आध्यात्मिक सार

इस प्रसंग में संवेदना है, स्नेह है और यह सन्देश है कि प्रभु हम सबकी खुशी से खुश और दुःख से दुखी होते हैं। वे हमसे दूर नहीं होते। वनवास की आज्ञा मिलने पर राम यह नहीं कहते कि मुझसे राज्य ले लिया है। वे कहते हैं कि मुझे वन का

राज्य दिया है, जहाँ मेरा बड़ा काम बनने वाला है। वे अपने पिता की आज्ञा को सुंदरता देते हैं। माता को राम की लीला की अनुभूति हो रही है। वे उनके चरणों में लिपट जाती हैं। माँ अपने पुत्र के स्नेह के कारण विचलित हैं। धर्म का पालन करना चाहती हैं; परन्तु जैसे राजा दशरथ ने अंत में राम का नाम लेकर ही अंतिम सहारा लेने का प्रयास किया, उसी प्रकार माता कौशल्या को भी पुत्र के रूप में भगवान ही दिख रहे हैं।

माता सीता को समझाते समय राम स्वयं भी यह नहीं सोच रहे हैं कि कौन मानेगा कि उनके साथ चलते हुए किसी को कष्ट हो सकता है और वो भी स्वयं जगतजननी जगदम्बा; जो उनसे पृथक हो ही नहीं सकती हैं। यह महत्त्वपूर्ण है कि व्यावहारिकता और प्रेम एक समय में पृथक रूप से देखने ही पड़ते हैं। प्रेम व्यावहारिकता को अंततः अपने में समाहित कर लेता है।

जीवन में उपयोगिता

1. तप से प्रभु प्राप्त हो सकते हैं; परन्तु अहंकार छोड़कर मन, बुद्धि, विवेक से उस ओर जाना चाहिए। गुरु की कृपा वस्तुतः बड़ा कारण है।
2. भाग्यशाली लोगों को माता, पिता, परिचित, शिक्षक कई रूपों में गुरु के दर्शन होते हैं और जीवन प्रकाशमान होने लगता है।
3. कथा हमें ध्यान, नाम और विषय से जोड़े रखती है।
4. हमें शिरोधार्य करना चाहिए कि कोई भी क्षण ऐसा आए जब मुझे अपने माता-पिता, बड़ों, गुरु के प्रति कोई कार्य करना हो तो सोचना नहीं है और उनकी त्रुटि तो बिलकुल नहीं देखनी है। कभी कभी हम अपने बड़ों की त्रुटि देखते हैं और भूल जाते हैं कि जिस समय हम अबोध थे, उस समय उन्होंने हमें चलना सिखाया, मार्ग बताये और उस पर चलकर ही हम वहाँ पहुंचे, जहाँ खड़े होकर यह निर्णय लेने की स्थिति में हैं कि मार्ग दिखाने वाला कैसा था? क्या यह उचित है कि जिस सहारे से हम आगे बढ़े हों उस सहारे की ही हम विवेचना करें और फिर उसमें दोष भी निकाल दें?
5. हम सदा कहते हैं जय सियाराम! हर दृष्टिकोण से यह भारतीय संस्कृति का सुंदर पहलू है। जहाँ पर पति-पत्नी के संबंध को जन्म जन्मांतर के रिश्ते के रूप में देखा जाता है और हर प्रकार से साथ निभाने की महत्ता है।
6. लक्ष्मण कहते हैं कि मैं आपके अलावा किसी और को नहीं जानता। यहाँ ऐसा नहीं है कि वे किसी संबंध को नहीं मानते, परन्तु वे कहना चाहते हैं कि प्रभु के आगे दूसरे सभी सम्बन्ध गौण हैं। सर्वोच्च संबंध की छाया में ही सम्बन्ध होते हैं।
7. यहाँ पर एक घटना से तीन अलग-अलग परिणाम उत्पन्न हो रहे हैं। भगवान के वनवास की तैयारी से अयोध्या शोक में है, देवता प्रसन्न हैं और रावण को अशुभ संकेत मिल रहे हैं। ईश्वर जानते हैं कि उनकी रचित घटनाओं से कहाँ पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

12

अयोध्याकाण्ड (दोहा 82-124)

रश्मि वार्ष्णेय

कथा सार

राम के वन गमन से मूर्छित दशरथ सचेत होने पर मंत्री सुमंत्र को उन्हें लौटा लाने के लिए साथ भेजते हैं। अयोध्यावासी भी साथ चल पड़ते हैं। राम के समझाने पर भी वापस नहीं लौटने पर, वे उन्हें तमसा नदी के तीर पर सोता हुआ छोड़ कर निकल जाते हैं। वे श्रृंगवेरपुर पहुँच कर गंगा महिमा का गुणगान करते हुए स्नान करते हैं। यहाँ निषादराज गुह उनके विश्राम की सारी व्यवस्थाएँ करते हैं और लक्ष्मण के साथ पहरेदारी करते हुए इस घटनाक्रम पर चर्चा करते हैं। सुबह राम को बड़ के दूध से जटाएँ बनाते देख कर व्यथित सुमंत्र उन्हें लौटने के लिए दशरथ की आज्ञा बताते हैं, जिसे धर्म विरुद्ध बता कर राम नहीं मानते। तब सुमंत्र सीता को वापस ले जाने का प्रयास करते हैं। लेकिन उनके लिए राम से बढ़ कर और कुछ नहीं होने के कारण, वे भी मना कर देती हैं। सुमंत्र के लौट जाने के बाद राम गंगा पार करते हैं। केवट बड़ी चतुराई से उनके चरण पखारता है और गंगा जी उनके पदनख देखते ही उनकी लीला समझ जाती हैं। निषादराज उन्हें मार्ग दिखाने, सेवा करने और पर्णकुटी बनाने के लिए साथ बने रहते हैं।

तीर्थराज प्रयाग पहुँच कर, राम उसकी महिमा बताने के बाद त्रिवेणी का दर्शन लाभ करते हैं और मुनि भरद्वाज से भेंट करते हैं। वे राम का मार्गदर्शन करने के लिए अपने चार ब्रह्मचारी उनके साथ भेज देते हैं, जिन्हें राम यमुना नदी के पास पहुँचने पर विदा कर देते हैं। मार्ग में जैसे-जैसे लोगों को उनके आगमन का पता चलता है, वे उनके दर्शन करने के लिए आते जाते हैं और उनके बारे में दूसरों से चर्चा करते रहते हैं। इनमें से एक तपस्वी बैरागी भी था, जिसे इन विभूतियों का विशेष स्नेह प्राप्त होता है।

अंतत: निषादराज को विदा कर, यमुना जी का यशोगान करते हुए तीनों आगे बढ़ते हैं। मार्ग में मिलने वाले लोग उन्हें गंतव्य तक पहुँचाने का प्रस्ताव देते हैं, जिसे वे विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर देते हैं। चलते-चलते सीता को थका हुआ जान कर राम वटवृक्ष की छाया में विश्राम करते हैं। तब वहाँ की महिलाएँ सीता से उनके बारे में जानकारी प्राप्त करती हैं। तरोताजा होने के बाद लोगों से सुगम मार्ग मालूम कर के वे सब प्रस्थान करते हैं। राम के पगचिह्न बचाते हुए सीता उनके बीच में पैर रखते हुए चलती हैं और लक्ष्मण दोनों के पदचिह्न दाईं तरफ रखते हुए चलते हैं। उधर वापस लौटने वाले लोग उनके सौंदर्य और उनके वनवास के बारे में ही वार्तालाप करते रहते हैं और उसे सुन कर वे लोग पछताते हैं, जो उनका दर्शन लाभ करने से चूक गए थे। चलते-चलते एक जगह वटवृक्ष और शीतल जल देख कर राम रात्रि-विश्राम करते हैं और सुबह वाल्मीकि आश्रम में पहुँचते हैं, जो उनकी अगवानी करते हैं।

आध्यात्मिक सार

विधि का विधान ऐसा है कि महलों में रहने वाले वन-वन भटकने पर मजबूर हो जाते हैं। व्यक्ति को अपने कर्मों का फल भुगतना ही पड़ता है : निज कृत करम भोग सबु भ्राता।।(92.2) मोह-माया के वशीभूत व्यक्ति भ्रम के नाना फंदों में फँसता चला जाता है। विषय-विलास के प्रति अनासक्त व्यक्ति ही सचेत अवस्था में अपने कर्मों का निष्काम निष्पादन करता है और राम-चरणों में समर्पित होता है।

केवट का प्रसंग राम के चरणामृत ग्रहण करने मात्र से भवसागर पार करने का मंत्र प्रदान करता है। 'ईश्वर से लगन' मुक्ति का कारक घटक होता है और इसमें ईश्वर का नख से शिख तक सब कुछ वरेण्यं होता है।

मुनि भरद्वाज का विचार है कि वास्तविक सुख की प्राप्ति कर्म, वचन और मन से छलरहित समर्पण से ही संभव है, अन्यथा: तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं किएँ कोटि उपचार।।

प्रत्यक्ष घटना में अनेक परोक्ष तथ्य भी निहित होते हैं, जो नियति के निर्धारित कार्यों का निष्पादन करते हैं और जिनका आकलन सामान्य बुद्धि नहीं कर पाती है। उदाहरण के लिए, राम के वनवास के कारण अनेक नर-नारी उनके सान्निध्य से कृतार्थ हुए थे, जिसके लिए उन्होंने दशरथ का आभार भी माना था।

जीवन में उपयोगिता

1. राम और सीता के व्यवहार से स्पष्ट होता है कि बड़ों के सामने मुँहजोरी अनुचित होते हुए भी, अपनी बात सलीके से रखी जा सकती है। वे अपनी बात विनम्रतापूर्वक, लेकिन धर्मनिष्ठ ढंग से सामने रखते हैं। जहाँ राम कहते हैं : धरमु धरेउ सहि संकट नाना।। (95.2), वहीं सीता रिश्ते-नाते, जंगली जानवर के खतरों, आदि के लिए कहती हैं: आरजसुत पद कमल बिनु बादि जहाँ लगि नाता।।97।। मोहि सब सुखद प्रानपति संगा।। (98.4)
2. गुणवंत शाह (रामायण : मानवता का महाकाव्य, मूल गुजराती लेखक गुणवंत शाह, हिंदी अनुवाद बंसीधर, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, वर्ष 2015, पृ.206) के अनुसार, राम के वचन पालन का एक बड़ा वैशिष्ट्य उसका शील से संलग्न होना था।
3. मनुष्य सामाजिक प्राणी है; लेकिन लोग अपने-आप तक सिमट गए हैं और किसी के साथ अपनी बात साझा नहीं कर पाने के कारण तनावग्रस्त रहते हैं। ऐसे में राम जहाँ-जहाँ से गुजरते हैं, वहाँ के नर-नारी उनसे मिलने आते हैं और कोई परिचय नहीं होने पर भी राम सभी से प्रेमपूर्वक मिलते हैं। उनका यह गुण न केवल उनकी कीर्ति में वृद्धि करता है, बल्कि मार्ग की कठिनाइयाँ भी दूर करता है और वे प्राय: तनावमुक्त ही रहते हैं।

13

अयोध्याकाण्ड (दोहा 124-169)

रश्मि वार्ष्णेय

कथा सार

राम ने वाल्मीकि से वनवास के लिए उपयुक्त स्थल का मार्गदर्शन माँगा। तब वाल्मीकि ने राम को सज्जनों के हृदय में वास करने का अनुरोध करते हुए चित्रकूट पर्वत पर निवास करने के लिए कहा। तदनुसार वे वहाँ प्रत्यंचा जैसी मंदाकिनी नदी के तट पर दो पर्णकुटियों को अपना आवास बनाते हैं। यह समाचार मिलने पर मुनिवृंद, कोल-भील, आदि सब उनसे भेंट करते हैं और उनकी सेवा करने के लिए लालायित होते हैं। सभी नदी-तालाब, पर्वतशृंखला, पशु-पक्षी, आदि इस स्थान का गुणगान करते हैं। राम की उपस्थिति यह स्थान भयमुक्त कर देती है। राम के सन्निकट रहने के कारण सीता और लक्ष्मण को घर की याद नहीं आती है; लेकिन राम को कभी-कभी घर की याद आ जाती है और दुःखी होने पर भी वे समय की प्रतिकूलता को समझ कर धैर्य धरते हैं।

दूसरी तरफ निषादराज लौटने पर सुमंत्र को वहीं पाते हैं। सुमंत्र उन्हें अकेला देख कर व्यथित हो जाते हैं। निषादराज उन्हें जैसे-तैसे समझा-बुझा कर रथ पर सवार करते हैं; लेकिन उनसे रथ नहीं चलता है। घोड़ों की दशा भी वैसी ही है। वे भी ठीक से चल नहीं पाते हैं। तब निषादराज उन्हें अपने चार सेवकों के साथ भेजते हैं। मार्ग में सुमंत्र इसी उधेड़बुन में लगे रहते हैं कि वे अयोध्या पहुँच कर सभी से क्या और कैसे कहेंगे? तमसा नदी पहुँचने पर वे चारों सेवकों को विदा करते हैं। वे रात में अयोध्या में प्रवेश करते हैं; लेकिन महल के बाहर खड़े रथ से सभी को भनक लग जाती है, जो राम के बारे में जानना चाहते हैं। सुमंत्र सबकी अनसुनी करते हुए दशरथ से मिलते हैं। वे भी राम की आस लगा कर ही बैठे हुए हैं। खाली हाथ लौटने पर भी सुमंत्र उन्हें धीरज बँधा कर सब बताते हैं, जिसे सुन कर शोकाकुल राजा की व्याकुलता और अधिक बढ़ जाती है, जिससे कौशल्या को अनहोनी का आभास हो जाता है और वह दशरथ को सँभालने का प्रयास करती है। तब दशरथ उन्हें श्रवण के पिता का श्राप बता कर, राम का स्मरण करते हुए प्राण त्याग देते हैं। फलतः संपूर्ण अयोध्यापुरी रात भर शोक-विलाप करती है।

सुबह वसिष्ठ मुनि नाव में तेल भर कर दशरथ की मृत देह रखवाने के बाद, भरत को ननिहाल से लाने के लिए दूत भेजते हैं। अपशकुनों के बीच आशंकित भरत भी अपने भाई शत्रुघ्न के साथ चल देते हैं। अयोध्या में कैकेयी से सब मालूम होने पर, भरत दुःख और क्रोध से उन्हें खरी-खोटी सुनाते हैं। शत्रुघ्न तो मंथरा की पिटाई तक कर देते हैं। तत्पश्चात वे कौशल्या से मिलते हैं। क्लांत कौशल्या उनसे मिलते समय मूर्छित हो जाती है। भरत इन परिस्थितियों के लिए स्वयं को दोषी मानते हैं। तब कौशल्या उन्हें समझाती है। सुबह वसिष्ठ के निर्देशानुसार भरत दशरथ का दाहसंस्कार करते हैं।

आध्यात्मिक सार

1. राम के वास्तविक स्वरूप को बताते हुए वाल्मीकि कहते हैं कि राम जगदीश्वर हैं, जो देवों के कार्य हेतु अवतरित हुए हैं। वे अगोचर, बुद्धि से परे, अव्यक्त, अकथनीय और अपार हैं। ज्ञेय न होने के कारण उनके बारे में नेति-नेति ही कहना पड़ता है। वे इस जगत के द्रष्टा हैं। ब्रह्मा-विष्णु-शिव को नचाने वाले हैं और वे भी उनका मर्म नहीं जानते

हैं। राम के बताने पर ही उन्हें जाना जा सकता है और तब व्यक्ति उनका स्वरूप पा कर आत्मा से परमात्मा बन जाता है। राम ही भक्त के व्याकुल हृदय के लिए शीतल चंदन हैं। राम चिदानंदमय हैं तथा विकार रहित हैं।

2. राम सर्वत्र विद्यमान हैं, अत: राम के रहने का स्थान बताना वाल्मीकि के लिए संभव नहीं है और वे सज्जनों के मन में बसने के लिए कहते हैं।
3. सज्जन को देव सहयोग स्वत: ही प्राप्त हो जाता है। राम की दिव्यता से अवगत देवगण चित्रकूट में उनकी पर्णकुटी बनाने विश्वकर्मा सहित आते हैं।
4. राजयोग प्रबल होने पर वन में भी राजत्व प्राप्त होता है। इसलिए पर्णकुटी में भी देव, नाग, किन्नर तथा दिक्पाल अपने दुखों के निवारण हेतु राम के पास आते हैं।
5. पाप-पुण्य कर्मों के फल तदनुसार ही मिलते हैं। चित्रकूट के पशु-पक्षी, वृक्ष-बेल, तृण, आदि को पुण्यों के कारण उन्हें राम का सान्निध्य मिला है, जबकि कैकेयी-मंथरा की जोड़ी के पाप कर्मों ने अयोध्या को राम से ही विलग कर दिया है।

जीवन में उपयोगिता

1. व्यक्ति के अच्छे गुण उसे सर्वत्र लोकप्रिय बनाते हैं। राम के गुणों के कारण ही ऋषि-मुनि, नर-नारी, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, नदी-नाले, पर्वतमालाएँ, आदि सभी राम के हो जाते हैं।
2. बुरे वक्त में भी धैर्य रखना चाहिए। अपने घर-परिवार की याद में दु:खी वनवासी राम कुसमय को समझ कर धीरज धरते हैं।
3. कहते हैं कि बुरे काम का बुरा नतीजा। राम के वनगमन का परिणाम दशरथ की मृत्यु, तीन रानियों का वैधव्य, कैकेयी-मंथरा की दुर्दशा, आदि के रूप में घटता है।
4. किसी भी व्यक्ति को अपने परिजनों के प्रति राग-द्वेष नहीं रखना चाहिए।
5. वचन सोच-समझ कर दिया जाए और उसे पूरा अवश्य किया जाए। इससे व्यक्ति की साख कायम रहती है।
6. छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, जात-पाँत, आदि का कोई भेद नहीं करना चाहिए। राम से मिलने सभी वर्ग के लोग आते हैं। वे सभी से समान भाव से मिलते हैं तथा यथोचित सम्मान देते हैं।
7. गुणवंत शाह ने सुमंत्र की अवधारणा की प्रासंगिकता के विषय में कहा है, "वर्तमान संदर्भ में सुमंत्र को समझाने के लिए दो संलक्षण उपयोगी हो सकते हैं। पहला - शासन की कर्तव्यपरायणता एवं कार्यदक्षता तथा दूसरा - मानव संबंधों में औचित्य एवं विवेक का परिपालन। यदि इन दो संलक्षणों का अनुपालन ठीक से होता है तो लोकतंत्र में अर्थपूर्णता एवं न्याय की पूरी संभावना है। ऐसे प्रशासन को हम मानवीय मूल्य संरक्षक शासन की संज्ञा दे सकते हैं।"
8. डॉ०पांडुरंग राव ने कहा है -"राजा के रोम-रोम में अनुरंजित राम-भावना को न कैकेयी समझ सकी, न कौशल्या, और न ही सुमित्रा। किसी ने कल्पना तक नहीं की कि राम-विरह की वेदना का राजा पर इतना मार्मिक और घातक प्रभाव पड़ेगा।" आज की पीढ़ी रिश्तों और भावनाओं की तुलना में रोजगार को अधिक महत्व देती है और माता-पिता को छोड़ कर अन्यत्र चली जाती है। दशरथ की दशा माता-पिता का साया सिर से उठने पर होने वाली स्थायी क्षति के प्रति आगाह करती है।

14

अयोध्याकाण्ड (दोहा 169 - 205)

विनीता मिश्रा

कथा सार

प्रातःकाल भरत गुरुओं के निर्देशानुसार वेद-वर्णित विधि से राजा दशरथ की देह का अंतिम संस्कार करते हैं। उन्होंने ब्राह्मणों को अनेक प्रकार की बहुमूल्य वस्तुएँ दान में देकर जिस प्रकार संतुष्ट किया, उसका वर्णन करना संभव नही है। समय और अवसर जानकर गुरु वशिष्ठ ने राजसभा की बैठक बुलवाई। शोक को दूर कर कर्त्तव्य पालन करने वाले वचन कहकर राजा दशरथ की धर्म परायणता का बखान किया। जिसके राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न जैसे पुत्र हों, उसके लिए शोक मनाने को निरर्थक बताते हुए उन्होंने भरत को पिता की अंतिम इच्छा और आज्ञा का पालन करने की शिक्षा देते हुए कहा, "जिस प्रकार राजा दशरथ ने वचन पालन के लिए राम के वियोग में अपने प्राण त्याग दिये, तुम्हें भी पिता के वचन को सत्य करना चाहिए।" उन्होंने भरत को दुःखी देखकर यह भी समझाया कि इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं कि तुमको राज सिंहासन दिया गया। यह तो पिता का अधिकार है कि वह किस पुत्र को राज्य देता है। तुम्हारे मन में राम के प्रति भाव को भी सभी जानते हैं; अतः तुम पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए इसे अपना कर्त्तव्य समझ कर राम के लौटने तक राज-काज सँभालो। जब राम लौट कर आयें तब जो उचित हो वही करना। माता कौशल्या, मंत्री आदि जब सभी भरत को इस प्रकार समझाने लगे तो धर्मपरायण भरत धीरज धारण करते हुए विनती करने लगे, "आप सभी के अनुसार आपकी सीख मेरे लिए उचित है और कल्याणकारी भी; किन्तु मुझे मेरा कल्याण केवल श्रीराम की सेवा करने में ही समझ में आता है और वह सेवा का अवसर मेरी माता की कुटिलता ने मुझसे छीन लिया है। मैं स्वयं को बहुत अभागा अनुभव कर रहा हूँ कि मेरे कारण राम और सीता को वन जाना पड़ा, कैकेयी जैसी माता के जाये पुत्र के लिए ये कुछ अनुचित भी नहीं। उस पर मेरा दुर्भाग्य कि आप लोग मेरे इस दुर्भाग्य को बढ़ाने में सहायक हो रहे हैं। मैं यह भी मानता हूँ कि इस कृत्य में मेरा कोई दोष नहीं है; पर इसे केवल मेरे राम ही जानते हैं।"

भरत लक्ष्मण के भाग्य की सराहना करते हैं, जिनको राम के इस वनवास काल में उनका सान्निध्य मिला; जिससे वे उनकी सेवा कर अपने जीवन को धन्य कर सकेंगे। भरत कहते हैं - "फिर भी मुझे अपने स्वामी पर भरोसा है कि वे मुझे अब भी अपना लेंगे और मेरे कहने पर सब कुछ भुलाकर अयोध्या लौट आयेंगे। अतः आप मुझे राम को वन से मना कर वापस लाने की अनुमति दीजिये।" भरत के ये वचन सभी को बहुत प्रिय लगे और सभी वन जाकर राम को वापस लाने के लिए चल पड़े। माताओं, गुरु वशिष्ठ, उनकी पत्नी अरुंधति एवं सभी गणमान्य लोगों को साथ लेकर और अयोध्या में सुरक्षा के सभी प्रबंध कर भरत वन की ओर चल पड़े। राम के वनगमन-पथ का अनुसरण करते हुए जैसे ही भरत श्रृंगवेरपुर पहुँचे, निषाद राज गुह ने अनहोनी के अंदेशे को भाँपते हुए भरत का मार्ग रोक लिया। शीघ्र ही उन्हें भरत के वन जाने का उद्देश्य पता चला और वे भरत को राम के निवास स्थान की ओर ले चले।

मार्ग में राम के विश्राम किये हुए स्थान देख-देख कर भरत अत्यंत दुःखी होते हैं और अपने स्वामी राम के इन सब कष्टों के लिए स्वयं को दोषी जान कर धिक्कारते हैं। भरत का ऐसा भ्रातृत्व-प्रेम देखकर सभी लोग उनकी सराहना करते हैं। पैदल चलते-चलते भरत के पैरों में छाले पड़ गए हैं फिर भी वे पैदल ही चले जा रहे हैं। प्रयागराज पहुँचने पर भरत तीर्थराज से अपने लिए यह वरदान माँगते हैं कि उन्हें मानव जीवन के चार पुरुषार्थों में से कुछ भी नहीं चाहिए, वे

हर जन्म में बस राम के चरणों में अनन्य प्रेम चाहते हैं। इस पर त्रिवेणी उन्हें संतुष्ट करती हैं कि राम को उनसे बढ़कर कोई भी प्रिय नहीं है।

आध्यात्मिक सार

अयोध्याकाण्ड के उपर्युक्त प्रसंग का आध्यात्मिक पक्ष यह समझने का है कि जो भी मनुष्य इस संसार में देह धारण कर जन्म लेता है उसकी मृत्यु निश्चित है। इसे धीरज के साथ स्वीकर करना और अपने कर्त्तव्य का पालन करना ही मनुष्य का धर्म है। जिसने अपने जीवनकाल में सदा धर्म का पालन किया हो और जिसकी संतान भी धर्मपरायण हो उसके लिए शोक नहीं करना चाहिये। इसके अतिरिक्त संसार में मनुष्य के लिए सर्वोत्तम कर्म भगवान से प्रेम है। उसे सांसारिक सुखों को त्याग कर राम के पथ का अनुसरण करना चाहिए, उनकी ही ओर उन्मुख रहना चाहिए। मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थ अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष से भी बढ़कर राम से प्रेम ही उसका ध्येय होना चाहिए।

राम ब्रह्म हैं, उनका अहित भला कौन कर सकता है; पर उनके भक्तों को अक्सर यह भ्रम हो जाता है कि कोई उनको भी नुकसान पहुँचा सकता है। तब गुरुजन उनके इस भ्रम को दूर करने में सहायता करते हैं। यह भी पता चलता है कि भगवान के प्रेम से भरे हुए जीवन की भरत की ही भाँति सारा संसार और भगवान स्वयं सराहना करते हैं। राम को पाने के लिए उनके पथ पर चल कर ही उन्हें पाया जा सकता है। विनम्रता और त्याग ही राम को पाने के साधन हैं।

जीवन में उपयोगिता

1. मृत्यु जीवन की एक प्रक्रिया है, उसके लिए शोकग्रस्त होकर कर्म का त्याग नहीं करना चाहिए।
2. सत्कर्म करना ही मनुष्य जीवन की सफलता है।
3. त्याग की भावना परस्पर प्रेम को बढ़ाती है और स्वार्थ मनुष्य का शत्रु है।
4. भावुकता में बहकर कर्त्तव्य और सुरक्षा को नहीं भूल जाना चाहिए।
5. आगा-पीछा सोचे बिना मरने-मारने पर उतारू नहीं हो जाना चाहिए, ऐसा न हो कि किसी प्रतिक्रिया से बाद में पछताना
6. अपने से श्रेष्ठ जन से मिलने जाने के लिए अहंकार रूपी रथ से उतर कर जाना चाहिए।
7. द्वेष और शंका को विनम्रता से दूर किया जा सकता है।
8. इस संसार में सुख और दुःख सबके जीवन में आते हैं, उन्हें समभाव से स्वीकार करना चाहिए, विचलित नहीं होना चाहिए।
9. किसी नए स्थान में पहुँचने पर वहाँ के मूल निवासियों से मित्रवत व्यवहार करना चाहिये और जहाँ तक हो सके उनसे मेल-मिलाप कर के ही अपने कार्य को सिद्ध करना चाहिए।
10. इस संसार में सबसे बड़ा पुरुषार्थ 'प्रेम' है, वही मनुष्य-जीवन का आधार है।

15

अयोध्याकाण्ड (दोहा 205 - 249)

राजरानी शर्मा

कथा सार

भरत राम को मनाने चित्रकूट प्रस्थान कर चुके हैं। निषादराज से भेंट हो गयी है और उन्हें साथ लेकर वे प्रयागराज आ पहुँचे। भरद्वाज मुनि से भेंट करते हैं, भरत के मन में बहुत संकोच होता है कि न जाने मुनिवर मुझे कितना स्वार्थी समझेंगे! भरद्वाज उन्हें सान्त्वना देते हुये कहते हैं कि तुम्हारा जन्म तो राम के प्रेम को पुष्ट करने के लिये ही हुआ है। वे भरत के साथ आये सभी अवधवासियों का भव्य स्वागत करते हैं। मुनि भरद्वाज रिद्धि-सिद्धि को आमंत्रित कर बड़े अतिथि की बड़ी सेवा का आयोजन करते हैं। भरत किसी भी सुखसुविधा का उपभोग नहीं करते। अवधवासी भी सकुचाते हैं मानो व्रत भंग हो जायेगा। रामसखा निषादराज से भरद्वाज मुनि बहुत प्रेम और आदर से मिलते हैं।

मार्ग के जीवजंतु तक भरत के दर्शन से तर जाते हैं। भरत के प्रयाग से आगे बढ़ते ही देवताओं को चिन्ता होती है कि कहीं हमारी बनी बनायी बात बिगड़ न जाए। यदि भरत राम को मनाने में सफल हो गये और राम अवध लौट गये तो असुर संहार का प्रयोजन सिद्ध कैसे होगा! लेकिन देवता सोचते हैं कि अयोध्या में तो माँ सरस्वती को मंथरा की बुद्धि फेरने भेज दिया; किन्तु अब भरत के प्रति अपराध हुआ तो श्रीराम के कोप का भाजन बनना होगा। सरस्वती देवताओं को दुर्वासा और अंबरीष की कथा याद कराती हैं।

वन में सुबह होते ही सीता राम को अपने दुःस्वप्न के बारे में बताती हैं कि भरत समाज सहित आये हैं, और सभी लोग उदास और दुखी हैं। उन्होंने सासुओं को भी दूसरे रूप (वैधव्य)में देखा। राम कहते हैं यह सपना ठीक नहीं है, कोई अप्रिय बात सुनायी देगी। उसी समय कोल-भीलों ने आकर भरत के आने की सूचना दी।

राम चिन्ता करते हैं, भरत क्यों आयेंगे; किन्तु लक्ष्मण भरत के आगमन से क्रोध और वीररस के वशीभूत हो जाते हैं। लक्ष्मण कहते हैं कि आज तो दोनों भाइयों को शंकर और ब्रह्मा भी न बचा पायेंगे; पर राम समझाते हैं कि ब्रह्मांड पलट जाए, फिर भी भरत को राजमद नहीं हो सकता। तुम धीरज धारण करो। राम को भरत की प्रशंसा करते देख देवता भी भरत के भाग्य व स्वभाव की प्रशंसा करते हैं। भरत को निषादराज दूर से वह तपोवन दिखाते हैं जहाँ राम की पर्णकुटी है। भरत तीव्र गति से वहाँ पहुँचते हैं - "पाहि नाथ कह नाहि गुसाईं। भूतल परेउ लकुट की नाईं।" राम सुनते हैं कि भरत प्रणाम कर रहे हैं तो प्रेम में अधीर होकर उठते हैं - "उठे राम सुन प्रेम अधीरा। कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा।।" यह स्थिति भावावेश और विह्वलता को दर्शाती है।

निषादराज राम को समाचार देते हैं कि गुरुजन हैं, माताएँ हैं और पुरवासी भी हैं तो वे त्वरित गति से गुरुवर और माताओं को लेने आगे जाते हैं। माताओं को वैधव्य में देख राम दुःखित होते हैं और पिता के परलोक गमन का कारण स्वयं के लिये स्नेह जानकर भाव विह्वल हो जाते हैं। राम बड़े पुत्र होने के नाते पिता का वेद-विदित पद्धति से श्राद्ध करते हैं और सब लोग उस दिन निर्जल व्रत करते हैं।

आध्यात्मिक सार

जिस भरत के राजसिंहासन के त्याग और भ्रातृ-भक्ति के लिये भारत विश्व में जाना जाता है, उसी प्रसंग का हृदयस्पर्शी वर्णन भरत की चित्रकूट यात्रा में किया गया है। भरद्वाज आश्रम में भरत का जो स्वागत हुआ है, उसके बारे में वे स्पष्ट कहते हैं - "मुनिहि सकुच पाहुन बड नेवता। तस पूजा चाहिय जस देवता।।"

अवधवासियों, भरत, गुरुवर और माताओं की सेवा-सुविधा के लिये मुनि रिद्धि-सिद्धि को बुलाते हैं। भरत का पश्चाताप दूर करते हुए कहते हैं - "तुम तो भरत मोर मत एहू। धरेऊ देह जनु राम सनेहू।।" विशेष बात यह कि गहन दुख में भी भरत राम- प्रेम की मूरत बने हैं। तुलसी लिखते हैं कि भरत के प्रेम का वर्णन सरस्वती व शेषनाग भी नहीं कर सकते। ब्रह्म-सुख के वर्णन के समान इसे भी कह पाना असंभव है।

भरत का विवेक, तप, सहज अनुराग भाव और भक्त का सबसे बड़ा लक्षण संकोच भाव यहाँ मर्मस्पर्शी बन पड़ा है। भक्त की तरलता और सरलता दर्शनीय है।

जीवन में उपयोगिता

1. परिवार पर संकट हो या हमारे मन में बहुत बड़ी दुविधा हो, उस समय हमें दूरगामी और विवेकी निर्णय लेना चाहिये। भरत ने संकट के समय भी कालजयी निर्णय लिया। विवेक और संतत्व की पराकाष्ठा प्राप्त की; क्योंकि संकट में ही धैर्य की परीक्षा होती है।
2. भरद्वाज मुनि की तपस्या के साथ-साथ व्यावहारिकता और अतिथि सत्कार में तत्परता बहुत प्रभावित करती है। ऋषि आश्रम में सबके लिये ऐसी व्यवस्था करते हैं जो देवताओं को भी दुर्लभ है।
3. निषादराज ने भक्ति से वह स्थान पाया कि ऋषि वशिष्ठ उन्हें लक्ष्मण से भी अधिक प्रेम से मिले और भरद्वाज विशेष प्रेम से मिले।
4. लक्ष्मण को आशंका है कि भरत सेना लेकर हम पर हमला करने आ रहे हैं तो राम उन्हें समझाते हैं कि भरत को राजमद नहीं हो सकता। जहाँ भरत की भ्रातृ-भक्ति की पराकाष्ठा है, वही भक्त के प्रति राम के अगाध विश्वास, सकारात्मक सोच, विवेकपूर्ण निर्णय व संयम का बहुत बारीकी से वर्णन किया है। देवत्व के साथ मानवीय व्यवहार को प्रश्रय दिया गया है, जो कि जीवनोपयोगी है।"
5. संकट के समय भी राम कर्तव्य पूर्ण करते हैं। पिता के दिवंगत होने का समाचार जानकर सब नियमों व आचार का निर्वाह करते हैं, सभी पूरे दिन निर्जल व्रत करते हैं। संयम-नियम को यात्रा और शोक में भी स्मरण रखना चाहिये।
6. राम सबसे पहले माता कैकेयी से मिलते हैं; ताकि उन्हें संकोच न हो। इस प्रसंग में सभ्य व्यक्ति और विद्वान के लक्षण बताये गये हैं। कहा गया है कि बिना सोचे कार्य करने के परिणाम दुखी करते हैं – 'सहसा कर पाछे पछताहीं, कहहि वेद बुध ते बुध नाहीं।'

16

अयोध्याकाण्ड (दोहा 249 - 285)

राजरानी शर्मा

कथा सार

भरत के साथ अवधवासी चित्रकूट में राम को मनाने आते हैं, तब सरल-मन वनवासी कोल-किरात स्नेहवश उनकी सेवा बहुत आदर भाव से करते हुये स्वयं को धन्य मानते हैं। कंदमूल-फल, अंकुर आदि भेंट करते हैं और मूल्य देने पर संकोच से कहते हैं कि आपका दर्शन श्रीराम के आगमन का प्रसाद है। वनवासी कहते हैं - "आप सबके दर्शन से लगता है कि मरुस्थल में गंगा का आना हो गया। हम वनवासी तो रात-दिन पाप करते हैं, फिर भी पहनने को वस्त्र और खाने को भरपेट भोजन नहीं जुटा पाते। यह सेवा-भाव राम-दर्शन का प्रभाव है। अवधवासी गद्गद होकर कोल, भील, किरातजन के श्रीराम चरणों में स्नेह की सराहना करते हैं। जब कौशल्या, कैकेयी व सुमित्रा भी भरत के साथ राम को मनाने आती हैं तो सीता अपनी तीनों सासों की सेवा समान भाव से करती हैं।

राम, लक्ष्मण और सीता की सरलता देखकर कैकेयी आत्मग्लानि में डूब जाती हैं। इस प्रसंग में भरत-चरित्र के अन्तर्द्वन्द्व का अत्यंत मार्मिक व मनोवैज्ञानिक ढंग से वर्णन किया गया है। भरत के मन में रात भर द्वंद्व चलता है। वे समाधान के अनेक विकल्प सोचते हैं कि राम वन न जाकर राजसिंहासन पर विराजमान हों। वे यह सोचते हैं कि सारे अनर्थ की जड़ मैं ही हूँ। प्रातःकाल गुरु के आह्वान पर आयोजित सभा में भरत के इस प्रस्ताव पर चर्चा होती है कि भरत-शत्रुघ्न वन चले जाएँ और सीता व लखन सहित राम अवध लौट जायें। भरत अपनी मनोवेदना विस्तार से रखते हैं। सभी गुरुजन भरत की भ्रातृभक्ति से अभिभूत होते हैं। मुनिवर को भरत की बात का समर्थन करते देख राम को परम संतोष होता है; किन्तु जब भरत राम को राजगद्दी पर विराजमान होने का बारंबार आग्रह करते हैं तो राम कहते हैं -"जिस वचन-पालन के लिये पिता ने देह त्याग दी, मैं उस वचन को अपूर्ण कैसे रख सकता हूँ!" इस तरह पहले दिन की सभा असमंजस में रह जाती है। बहुत से विकल्प और उपाय सुझाये जाते हैं और उन पर विचार किया जाता है। भरत विनीत और आतुर होते हुये दो बार सभा में अपना मत रखते हैं। मुनि वशिष्ठ कहते हैं - हे राम! भरत का मत साधुमत, लोकमत, वेदमत और राजनीति का सार है। सभी विकल्पों पर चर्चा करने के बाद भी समाधान का उपाय नहीं मिलता।

इसी समय राजा जनक के दूत समाचार जानने के लिये आते हैं। सब बातें जानकर वेग से वापिस लौटते हैं। फिर राजा जनक का सपरिवार चित्रकूट आगमन होता है। दोनों राजसमाज दशरथ के परलोक-गमन के शोक से व्याकुल हो जाते हैं। परस्पर वार्तालाप व संवाद करते दोनों कुलों को चार दिन व्यतीत हो जाते हैं। मुनि वशिष्ठ जनक-परिवार के सत्कार का सम्यक ध्यान रखते हैं तथा राम से भी भरत के मत को मानने का आग्रह करते हैं।

जनकपुर की रानियाँ कौशल्या के पास राजा दशरथ की मृत्यु पर शोक संवेदना व्यक्त करने आती हैं। सभी रानियाँ भरत के स्नेह की प्रशंसा करती हैं। कौशल्या कहती हैं कि मुझे राम-लक्ष्मण-सीता के वन जाने की चिन्ता नहीं है, किन्तु भरत की विशेष चिन्ता है। वे रानी सुनयना से निवेदन करती हैं कि वे भरत को समझाने के लिये राजा जनक से कहें। वे कहती हैं कि अवधनरेश के परलोकगमन के बाद हमारी सहायता या तो ईश्वर करेंगे या मिथिलापति। इस प्रसंग में रानी सुनयना कौशल्या के शील व विनय की प्रशंसा करती हैं कि आप राम की माँ हैं और चक्रवर्ती दशरथ की पत्नी हैं, आपकी विनती सर्वथा उचित है।

इस अवसर पर विधि व मर्यादा का पालन करते हुये सीता की माँ कौशल्या से सीता को कुछ देर के लिये, अपने साथ जनकपुर के शिविर में ले जाने की अनुमति चाहती हैं। यहाँ विशेष रूप से सीता परिवार के सभी जन से यथायोग्य मिलती हैं।

आध्यात्मिक सार

अयोध्याकाण्ड में चित्रकूट प्रसंग आध्यात्मिक ऊँचाई और भारतीय संस्कृति के उदात्त जीवन मूल्यों के वर्णन का माध्यम बनता है। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि कोल, किरात और भील आदि वनवासियों के द्वारा अवधवासियों का आदर-सत्कार व आत्म स्वीकृति सराहनीय है। वनवासियों के प्रेम के आगे अवधवासी अपने प्रेम को तुच्छ समझते हैं। वनवासी कहते हैं कि यह चमत्कार राम की कृपा का प्रसाद है, वरना हम तो रात-दिन पाप करते रहते थे।

चित्रकूट प्रसंग गूढ़ है, जैसे हाथ में दर्पण हो और दर्पण में मुख हो तब भी हम दर्पण में से मुख को पकड़ नहीं पाते। इसी प्रकार भरत की मनोकामना का समाधान करने हेतु तीन बार सभा होती है। बार-बार इस बात पर बल दिया जाता है कि भरत का प्रस्ताव साधुमत, लोकमत, राजनीति और वेदनीति का निचोड़ है। राजा जनक संयम, धैर्य और व्यावहारिकता का पूर्ण निर्वाह करते हैं। भरत के त्याग और आदर्श भ्रातृ-भक्ति का वर्णन करते हुये तुलसी ने भरत-चरित्र को समझने और उसकी महानता जानने के लिये इस प्रसंग की विधिवत् व मनोगत संरचना की है।

ऋषि-मुनि के साथ अवध और मिथिला के राजसमाज भरत के अन्तर्द्वन्द्व को समझते हैं। वनवासियों का राम-प्रेम व सीता द्वारा तीनों सास-माताओं की सेवा करना विशेष ध्यानाकर्षित करता है।

जीवन में उपयोगी बिन्दु

1. वनवासियों का आतिथ्यसत्कार प्रेरित करता है कि हमें भी सहज ही दूसरे की परिस्थितियों को समझकर आतिथ्य करना चाहिये।
2. मुनि वशिष्ठ राजा जनक के परिवार की पूरी व्यवस्था करते हैं। कंद-मूल-आहार सादर भिजवाते हैं। ऋषि मुनि सदैव अनुकरणीय आचरण करते हैं।
3. कैकेयी का प्रायश्चित्त सिखाता है कि कोई ऐसा कार्य किसी के कहने से सहसा नहीं करना चाहिये, जिससे कि जीवन भर पछताना पड़े।
4. दुःख में भी मर्यादा और अपने कर्तव्यों का ध्यान रखना चाहिये।
5. सभा कैसे चलती है, कैसे अपना मत रखा जाता है और कैसे निर्णय लिया जाता है, ये सब बातें भी चित्रकूट सभा को पढ़-सुनकर जानी जा सकती हैं।
6. सीता का विवेक अनुकरणीय है कि रात को माँ के साथ न रहकर अवधपुर के शिविर में आ जाना चाहिये।
7. राजमहिला-सम्मेलन के अन्तर्गत कौशल्या और सुनयना की मर्यादा सीखने योग्य है। विनय, शील और स्नेह के साथ विवेक का पूरा ध्यान रखना चाहिये और शोक में धैर्य अवश्य रखना चाहिये।
8. अंत में पारिवारिक स्नेह, राम-भरत जैसी परस्पर प्रीति और त्याग की शिक्षा मिलती है।

17

अयोध्याकाण्ड (दोहा 285 - 326)

राजरानी शर्मा

कथा सार

अयोध्याकाण्ड के इस अंश में भरत के मन का असमंजस बताते हुये तुलसी ने स्नेह और कर्तव्य के बीच का द्वन्द्व वर्णित किया है; साथ ही भरत-कूप तथा अवधवासियों व जनकपुरवासियों के लौटने की कथा का वर्णन है।

सीता अपने पिता जनक से मिलती हैं और बहुत ही भावुक हो जाती हैं। तुलसी कहते हैं - पृथ्वी की पुत्री ने समय को देखते हुए पृथ्वी जैसा ही धैर्य धारण किया और संयम रखा। जनक कहते हैं कि पुत्री! तुमने दोनों कुलों को पवित्र कर दिया। सीता अपनी माँ से कहती हैं कि यहाँ रात्रि में रुकना उचित नहीं, मुझे अवध के शिविर में जाना चाहिये। सीता को स्नेह से विदा करके, रानी सुनयना और राजा जनक भरत की चर्चा करते हुए कहते हैं कि उनका व्यवहार सोने में सुगंध और चंद्रमा में अमृत के समान है।

अगले दिन पुन: दूसरी सभा में राम-वशिष्ठ संवाद होता है। राम कहते हैं - बहुत दिनों से दोनों परिवार कष्ट सह रहे हैं; शीघ्र सब लौटें, ऐसा उपाय हो। पुन: वशिष्ठ और जनक बात करके समाधान खोजने की याचना करते हैं। भरत भी राजा जनक से भेंट करते हैं, कहते हैं कि श्रीराम के रुख़ और धर्म को ध्यान में रखते हुये, मुझे पराधीन जानकर और सबका प्रेम पहचान कर, सबकी सम्मति से जो सबके लिए हितकारी हो, वह कीजिये; इसलिये भरत जनकराज के साथ राम के पास जाते हैं।

यहाँ देवता सशंकित होते हैं कि भरत विनीत हैं और राम सहज संकोची; कहीं बनी-बनाई बात बिगड़ न जाय। अत: वे माता सरस्वती से भरत की मति फेरने की बात कहते हैं। सरस्वती इन्द्र को कहती हैं कि आप को हज़ार आँखों से भी सुमेरु पर्वत नहीं दिखाई देता और इस दुष्कर्म में उनका साथ देने में वे अपनी असमर्थता व्यक्त करती हैं।

चित्रकूट में आम दरबार का दृश्य बहुत मार्मिक और गूढ़ है। भरत अति विनम्रता से अपनी बात रखते हैं और राम के स्नेह और वात्सल्य की बार-बार प्रशंसा करते हैं। अंतत: वे राम से कहते हैं - आज्ञा कीजिये कि मुझे क्या करना है। राम भरत को स्नेह से अपने पास बैठाकर कहते हैं कि सूर्यवंशी रघुवंश की नीतियाँ सब जानते हैं। राज्य का सब कार्य गुरु-प्रभाव से भली भाँति चलेगा, तुम चिन्ता न करो। हे भरत! सूर्यकुल की मर्यादा के अनुरूप कार्य करो और मुझसे भी वही करवाओ। राम यहाँ भरत को मुखिया का कर्त्तव्य बताते हुए संक्षेप में राजधर्म का वर्णन करते हैं। देवता अपनी कुचाल चल कर सबके मन उचाट कर देते हैं। सारी चित्रकूट सभा को स्नेह-समाधि लग जाती है और सबका मन उचट जाता है। राम देवताओं की इस कुचाल को मन ही मन समझ जाते हैं। भरत भी राम की बात समझ जाते हैं, व उनसे कुछ सहारा चाहते हैं, जिससे वनवास की अवधि कट सके।

भरत पूछते हैं कि अयोध्या से आते समय गुरु की आज्ञा से राम के राज्याभिषेक के लिये सब तीर्थों का जो पवित्र जल लेकर आये हैं उसका क्या किया जाये? इसके साथ ही वे चित्रकूट जैसे पावन तीर्थ के दर्शन की इच्छा भी सबके सामने रखते हैं। इस पर राम स्वयं आज्ञा न देकर अत्रि ऋषि की आज्ञा से चित्रकूट देखने एवं पर्वत के पास ही एक

कुआँ है, उसमें तीर्थ जल के पात्र छोड़ देने की बात कहते हैं। भरत पाँच दिनों में समस्त चित्रकूट की यात्रा नियम और संयम के साथ करते हैं।

पुन: चित्रकूट में तीसरा दरबार लगता है, जिसमें भरत राम से नीति-उपदेश व राज्य के लिये दिशा-निर्देश माँगते हैं तथा अवलंबन के रूप में राम भरत को खड़ाऊँ देते हैं; जिन्हें भरत शीश पर धारण कर लेते हैं। सब उदास मन से अवध लौटने की यात्रा का प्रबंध करते हैं। राम सबको अभिवादन, चरण वंदन करके, स्नेहपूर्वक विदा करते हैं। सब लोग राम, सीता व लक्ष्मण से भेंट कर प्रस्थान करते हैं। राम माताओं को प्रबोध देकर पालकी में बैठाते हैं और राजा जनक, सभी मुनिगण, साधु-संत आदि का सम्मान कर विदा देते हैं। सीता सासुओं को चरण-वंदन कर विदा देती हैं। राम से निषादराज, कोल, किरात व भील वनवासी भी भारी मन से विदा लेते हैं। चार दिन बाद सब लोग अयोध्या आते हैं, जहाँ जनक भी चार दिन रुक कर व्यवस्था करके जनकपुर प्रस्थान करते हैं। भरत सिंहासन पर राम की पादुका स्थापित कर देते हैं, उनसे ही आज्ञा माँगकर राज्य करते हैं। भरत स्वयं नंदीग्राम में अपना आसन बनाते हैं, साँथरी पर सोते हैं और वनवास से भी कठिन व्रत-संयम का पालन करते हैं।

आध्यात्मिक सार

अयोध्याकाण्ड में हमें साधु-संत, ऋषि-मुनि, निषादराज और राजा जनक सब भरत के अतुल्य राम-प्रेम से विमोहित लगते हैं, जिससे हमें भी राम-प्रेम की प्रेरणा मिलती है। राजा जनक का विवेक और ऋषि-मुनि, पुरजन-परिजन सबको आदर देने का भाव यह व्यक्त करता है कि भरत चित्रकूट की तीर्थयात्रा कर और भरत-कूप का निर्माण कर मानो अपनी चेतना को राम की आज्ञा के लिये तैयार कर रहे हैं। राम-चरण में दृढ़ अनुराग बढ़ाने का प्रसंग है।

जीवन में उपयोगिता

1. चित्रकूट प्रसंग का यह सबसे संश्लिष्ट भाग है, जहाँ आम सभा होने से पूर्व जनक-वशिष्ठ, राम-भरत, जनक-राम व जनक-भरत-संवाद होते हैं। इससे यह ज्ञात होता है कि कार्य के पूर्व में विवेक युक्त मंत्रणा आवश्यक है।
2. भरत पूरी तैयारी व संकल्प के साथ राम को लौटाने और उनका राज्याभिषेक करने के लिये आते हैं; पर वे हठधर्मी नहीं हैं। राम के समझाने पर अवलंब लेकर मान जाते हैं।
3. राजा जनक विदेह हैं, ज्ञानवान हैं, फिर भी हर कार्य व्यावहारिक रूप से करते हैं। वे मानवता व प्रेम का निर्वहन करते समय संयम रखते हैं। यह प्रेरक है।
4. भरत पावन तीर्थ-जल का आदर कर कूप में समर्पित कर देते हैं, इस से पर्यावरण के प्रति जागरूक रहने की शिक्षा मिलती है।
5. व्रत, नियम व संयम से संकल्प की शुद्धि होती है। भरत का जीवन संतों को लुभाता है और हमें प्रेरणा देता है।
6. राम सबको विदा करते समय भी गरिमा का ध्यान रखते हैं, यह अनुकरणीय है।
7. अयोध्याकाण्ड का यह भाग हमें जीवन में भाई-भाई के प्रेम की शिक्षा देता है। हमें यह भी सीख देता है कि कुल-परंपरा और राष्ट्र सर्वोपरि हैं। इनका हमेशा सम्मान करना चाहिए।

18

अरण्यकाण्ड (आरंभ - दोहा 20)

राजेश कुमार मिश्रा

कथा सार

अरण्यकाण्ड का आरंभ देवराज इंद्र के मूर्ख पुत्र जयंत की कथा से होता है, जो कौए का रूप लेकर राम का बल देखना चाहता था। इस भावना से प्रेरित होकर वह राम के सामने सीता के चरणों में चोंच मार देता है। ऐसा दुस्साहस करके जब वह वहाँ से भागने लगा तो राम ने उस पर तिनके का बाण छोड़ दिया। अपनी रक्षा के लिए पहले वह पिता इंद्र के पास पहुँचा; पर इंद्र ने उसे सहायता देने में अपनी असमर्थता बता दी। फिर वह ब्रह्मलोक, शिवलोक आदि लोकों में भागता रहा; पर राम विरोधी होने के कारण किसी ने भी उसकी रक्षा नहीं की। अंत में उसे नारद मुनि मिले। उनकी सलाह मानकर वह अपनी रक्षा हेतु राम के चरणों में आ गिरा। इतने जघन्य अपराध के बावजूद, परम दयालु राम ने अपनी शरण में आए हुए जयंत पर अपनी कृपा बरसाई और उसे एक नेत्र से विहीन कर छोड़ दिया।

प्रभु ने चित्रकूट में अपने प्रवास के दौरान अनेक लीलाएँ कीं। चित्रकूट छोड़ने के बाद वे अत्रि मुनि के आश्रम गए, जहाँ मुनि ने उनका स्वागत किया। ऋषि-पत्नी अनसूया ने सीता को दिव्य वस्त्र और आभूषण पहनाये। इन दिव्य वस्त्रों की विशेषता यह थी कि वे नित्य नवीन तथा निर्मल बने रहते थे। उन्होंने सीता को स्त्री-धर्म से संबन्धित शिक्षा दी। तत्पश्चात राम अत्रि ऋषि से आज्ञा लेकर, आगे की ओर प्रस्थान करते हैं। राह में उन्हें कई राक्षसों का सामना करना पड़ता है और भगवान राम की कृपा से उन सबको परमधाम की प्राप्ति होती है।

उसके बाद, राम लक्ष्मण एवं सीता सहित शरभंग मुनि के आश्रम पहुँचते हैं। यद्यपि मुनि इस लोक से प्रस्थान करने के कगार पर थे; पर इसी बीच जब उन्हें ज्ञात हुआ कि उनके पास प्रभु राम पधारने वाले हैं, तो वे अपनी योग-क्षमता से मृत्यु को टाल कर, भगवान राम की प्रतीक्षा करते हैं। राम से मिलने के बाद शरभंग मुनि योगाग्नि से अपने शरीर को जलाकर वैकुंठ के लिए प्रस्थान करते हैं।

इसके बाद राम वन में आगे गमन करते हैं। रास्ते में हड्डियों का ढेर देखकर उन्हें बड़ी दया आती है। उस ढेर के बारे में मुनिगण प्रभु को बताते हैं कि ये सब राक्षसों द्वारा मारे गए ऋषि-मुनियों की अस्थियाँ हैं। यह जान करुणानिधान राम पृथ्वी को राक्षस-विहीन करने का प्रण लेते हैं।

उसके बाद राम की मुलाक़ात अगस्त्य ऋषि के शिष्य सुतीक्ष्ण से होती है, जो प्रेमभक्ति में डूब चुके थे। उन्हें साथ लेकर राम अगस्त्य ऋषि के आश्रम पहुँचते हैं और उनसे ऐसा मंत्र देने की विनती करते हैं जिससे वे मुनिद्रोहियों (राक्षसों) का वध कर सकें। अगस्त्य ऋषि उन्हें दण्डक वन में जाने की और उसे घोर शाप से मुक्त कर पवित्र करने की सलाह देते हैं। अगस्त्य ऋषि से आज्ञा लेकर राम पंचवटी पहुँच जाते हैं। वहीं गिद्धराज जटायु से उनकी भेंट होती है। राम गोदावरी नदी के समीप पत्तों की एक कुटिया बनाकर सीता और लक्ष्मण सहित रहने लगते हैं।

एक दिन राक्षस रावण की बहिन शूर्पणखा भ्रमण करते-करते पंचवटी पहुँचती है। वहाँ राम और लक्ष्मण को देखकर काम-भाव से व्याकुल हो उठती है। जब वह राम के पास पहुँच उनसे विवाह की इच्छा प्रकट करती है तो राम

उसे लक्ष्मण की तरफ भेज देते हैं। जब वह लक्ष्मण के पास पहुँच उनसे विवाह का प्रस्ताव रखती हैं तो उन्हें लक्ष्मण से तीखा उत्तर मिलता है। तिलमिला कर वह पुनः राम के पास आती है और अपना भीषण रूप प्रकट कर देती है। राम संकेत से लक्ष्मण को शूर्पणखा के नाक-कान काट देने को कहते हैं और लक्ष्मण वैसा ही कर देते हैं। नाक-कान काटे जाने पर विलाप करती शूर्पणखा अपने भाईयों खर और दूषण के पास पहुँच जाती है और उन्हें सारी बातें बताती है। गुस्से में आकर खर और दूषण अपनी विशाल सेना लेकर राम और लक्ष्मण के पास युद्ध करने पहुँच जाते हैं। राम के साथ भीषण युद्ध होता है, जिसमें खर और दूषण सहित सारी सेना का वध हो जाता है। खर और दूषण का वध हुआ देख, शूर्पणखा अपने भाई रावण के पास पहुँचती है।

आध्यात्मिक सार

जयंत की कथा इस बात को स्पष्ट करती है कि यदि भगवान से कोई बैर करे तो किसी भी लोक के, किसी भी देवी-देवता में वह शक्ति नहीं, जो भगवान के दिये दण्ड से बचा सके।

अनसूया माता द्वारा बताई गयी स्त्री-धर्म-सम्बन्धी सारगर्भित बातें हर स्त्री के लिए स्वयं की शक्ति के उत्थान हेतु सुदृढ़ उपाय है। चार प्रकार की पवित्रता का वर्णन, संसार के हर मनुष्य के आध्यात्मिक विकास हेतु पथ-प्रदर्शक है और हर मनुष्य को उत्तम श्रेणी की पवित्रता के पालन हेतु प्रेरणा देता है।

वर्तमान युग में जब ज्ञान, योग तथा जप का पालन दुर्लभ होता जा रहा है, ऐसी परिस्थिति में जो लोग अन्य सब भरोसों को छोड़कर राम को ही भजते हैं, वे ही चतुर हैं।

भगवान स्वयं ज्ञान, वैराग्य तथा माया का गूढ रहस्य, ईश्वर और जीव में भेद, तथा भक्ति की सर्वोच्चता का विवरण कह गए हैं।

शूर्पणखा की घटना से यह सीख मिलती है कि संसार की हर सुंदरता क्षणभंगुर है और स्वार्थ या काम-भावना पूर्ण होने तक ही ठहरने वाली है।

आज के युग में उपयोगिता

1. वर्तमान युग में भौतिक सुखों की आकाँक्षावश भिन्न-भिन्न देवी-देवताओं को ही सब कुछ मान कर पूजा करने की परंपरा चल पड़ी है। ऐसा करने में कोई बुराई नहीं है; पर हर मनुष्य को इस बात के प्रति सतर्क रहना जरूरी है कि अज्ञानतावश भी, यदि किसी ने भगवान की अवहेलना की तो उसके बुरे परिणामों से बचाने की क्षमता किसी भी देवी-देवता में नहीं है।
2. अनसूया माता के द्वारा स्त्री-धर्म के बारे में दी गई शिक्षा को जन-जन तक पहुँचाना अत्यावश्यक हो गया है। आज जब स्त्री और पुरुष दोनों अपने धर्म से भटकते चले जा रहे हैं; ऐसी परिस्थिति में 'असली स्त्री-शक्ति' के जाग्रत होने की आवश्यकता है, जो निश्चित ही अनसूया माता के बताए स्त्री-धर्म के पालन से संभव हो पायेगा।
3. सांसारिक सुंदरता मात्र स्वार्थ और कामना-पूर्ति तक ही दिखने वाली है और सफलता न मिलने की स्थिति में व्यक्ति को अपना असली बीभत्स रूप दिखाने में देर नहीं लगती।

19

अरण्यकाण्ड (दोहा 20 - 46)

राजेश कुमार मिश्रा

कथा सार

खर-दूषण की मृत्यु के बाद शूर्पणखा अपने भाई रावण के दरबार में पहुँचकर सारी बातें बताती है और फिर ताने देते हुए उसे कहती है कि हे दशानन! क्या तेरे जीते जी मैं नकटी-बूची होकर जीऊँ और अपराधी अरण्य में स्वच्छंद विहार करें? रावण शूर्पणखा को मनाकर अपने महल में चला जाता है; किन्तु उसे नींद नहीं आती। वह समझ जाता है कि पृथ्वी का भार उतारने के लिए भगवान ने 'राम' के रूप में अवतार ले लिया है और वह निश्चय करता है कि शत्रुता कर उनके बाण से प्राण छोड़कर मुक्ति प्राप्त करेगा।

उधर लक्ष्मण जब वन में कंद-मूल-फल लेने जाते हैं तो राम जनकनंदिनी से कहते हैं कि अब मैं कुछ सुहावनी मनुष्य-लीला करूँगा। अतः तुम तब तक अग्नि में निवास करो जब तक कि मैं राक्षसों का विनाश न कर डालूँ। सीता स्वामी के चरणों को अपने हृदय में रखकर अग्नि में समा जाती हैं और अपनी ही तरह अपना प्रतिबिंब वहाँ रख छोड़ती हैं।

उधर रावण अपने मामा मारीच से कपट का हिरण बनने को कहता है। मारीच विवशतावश कपट-मृग के रूप में आकर राम और लक्ष्मण को सीता से दूर करने में सफल हो जाता है। सीता को अकेला देख रावण उनका हरण करने में सफल हो जाता है और उन्हें लंका ले जाकर अशोकवाटिका में रख लेता है। रास्ते में जटायु सीता को छुड़ाने की कोशिश करते हैं, पर रावण पंख काट कर उन्हें घायल कर देता है। उधर जब दोनों भाई वापस लौटते हैं तो सीता को कुटी में न पाकर राम साधारण मनुष्य की भाँति व्याकुल हो विलाप करने लगते हैं। सीता की खोज में जब दोनों भाई निकलते हैं तो उन्हें रास्ते में घायल जटायु मिलते हैं, वे बताते हैं कि रावण उन्हें दक्षिण दिशा में ले गया है। अखंड भक्ति का वर माँग, जटायु श्री हरि के परमधाम चले जाते हैं। राम जटायु के शरीर की दाहकर्म आदि क्रियाएँ अपने हाथों से करते हैं और फिर वन में आगे बढ़ते हैं।

रास्ते में कबंध राक्षस का वध कर उसे सद्गति देते हुए, वे शबरी के आश्रम पहुँच जाते हैं। राम का स्वागत करके शबरी उन्हें स्वादिष्ट कंद, मूल और फल खिलाती हैं। तत्पश्चात शबरी राम से पूछती हैं कि मैं किस तरह आपकी स्तुति करूँ? उत्तर में राम कहते हैं कि वे तो केवल एक भक्ति का ही संबंध मानते हैं। राम शबरी को नवधा भक्ति का ज्ञान देते हैं। अंत में राम कहते हैं कि चूँकि उनमें सभी नौ प्रकार की दृढ़-भक्ति है, वे उस गति को पाएँगी जो योगियों को भी दुर्लभ है। फिर शबरी से राम सीता के बारे में पूछते हैं। शबरी ने उन्हें पंपा नामक सरोवर की ओर जाने की सलाह दी, जहाँ उनकी मित्रता सुग्रीव से होगी। यह सब बताकर शबरी योगाग्नि से अपनी देह त्याग करके दुर्लभ हरिपद में लीन हो जाती हैं।

भगवान पंपा सरोवर पहुँचते हैं। उसी समय वहाँ उनसे मिलने नारद पहुँच जाते हैं। अवसर देख नारद पूछते हैं कि हे राम! जब मैं विवाह करना चाहता था तो आपने किसp कारण से मुझे विवाह नहीं करने दिया? राम जीवन का गूढ

रहस्य बताते हैं, जिससे नारद संतुष्ट हो जाते हैं। नारद अपने दूसरे प्रश्न में संतों के गुणों के बारे में पूछते हैं। इसके उत्तर में भगवान के मुख से उनके अपने भक्तों का गुणगान सुनकर नारद सिर नवाते हैं और ब्रह्मलोक के लिए प्रस्थान कर जाते हैं।

आध्यात्मिक सार

भगवान राम ने सीता को राक्षसों के विनाश की लीला करने तक अग्नि में निवास करने को कहा। यह सीता जैसी उत्तम पतिव्रता स्त्री के प्रति भगवान राम की एक पति के रूप में, सर्वोच्च आदर्श की प्रस्तुति थी। दूसरी ओर सीता का अपने पति की बात का एक बार में ही पालन करना और अपने स्वामी के चरणों को हृदय में रख अग्नि में प्रवेश कर जाना - एक 'उत्तम आदर्शों वाले अपने पति के प्रति', एक उत्तम नारी द्वारा अपने सर्वोच्च आदर्श की प्रस्तुति थी। आज के युग में पति-पत्नी के संबंध की महत्ता को समझने हेतु राम और सीता की ये लीलाएँ गूढ़ रहस्यों से परिपूर्ण आदर्श प्रस्तुत करती हैं।

जटायु का अपनी वृद्धावस्था में भी सीता को बचाने का भरसक प्रयास करना यह संदेश देता है कि भगवान के कार्य करने का जब और जैसा भी मौका मिले, हमें चूकना नहीं चाहिए। यदि ऐसा करते हुए हमारे प्राण भी चले जाएँ तो दयालु भगवान राम की कृपा से हमें परमधाम की प्राप्ति सुनिश्चित ही है।

भगवान राम ने शबरी से नवधा भक्ति बताते हुए स्पष्ट कहा कि वे केवल एक भक्ति का ही संबंध मानते हैं। इस बारे में भगवान शिव भी कहते हैं कि हरि-भजन ही एकमात्र सत्य है। जो लोग राम जी का पवित्र यश गाते और सुनते हैं; वे वैराग्य, जप और योग के बिना ही राम की दृढ़ भक्ति पा जाते हैं।

जीवन में उपयोगिता

मारीच द्वारा यह पता लगता है कि कौन से नौ प्रकार के लोगों से विरोध करने में कल्याण नहीं होता।

1. भगवान ने यह बात स्पष्ट कही है कि जो कामदेव की सेना को देखकर भी धीर बना रहता है, जगत में ऐसे वीरों की प्रतिष्ठा होती है। आज के युग में जब हर तरफ से और हर माध्यम से कामदेव की सेनाएँ अपना प्रहार कर रही हैं, तो हर व्यक्ति को भगवान की इन बातों का अनुकरण करते हुए धीर बने रहकर अपना कल्याण सुनिश्चित करना चाहिए।
2. नारद को दिये वरदान से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'राम' नाम सब नामों से बढ़कर है। नारद के प्रश्न के उत्तर में भगवान की 'स्त्री के साथ' के बारे में कही गयी बातें, आज जीवन में पग-पग पर चरितार्थ होती दिख रही हैं। अतः भगवान के बताए निर्देशों को ध्यान में रखकर हमें बुराइयों से बचते हुए आगे बढ़ना चाहिए।
3. संतों के लक्षण बताते हुए भगवान राम ने जिन गुणों की चर्चा की है वे आज के परिप्रेक्ष्य में भी उतने ही सामयिक और महत्वपूर्ण हैं। आज हर मनुष्य को इनमें से अधिक से अधिक गुणों को अपने जीवन में धारण करने की कोशिश करनी चाहिए।

20

किष्किंधाकाण्ड

शिवप्रकाश अग्रवाल

कथा-सार

रावण जब सीता को ले गया तब राम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ उन्हें वन-वन ढूँढते रहे। तभी भक्त शबरी ने पंपा सरोवर की राह बताई और यहीं से आरंभ होता है रामचरितमानस का सब से छोटा काण्ड - किष्किंधाकाण्ड।

राम और लक्ष्मण आगे चले और ऋष्यमूक पर्वत के पास पहुँचे। बड़े भाई बालि से अपने प्राणों की रक्षा करने हेतु सुग्रीव वहाँ अपने स्वजनों के साथ रहते थे। ऋषि के श्राप के कारण इस पर्वत पर बालि नहीं आ सकता था। जब सुग्रीव ने दो वीरों को पर्वत के निकट देखा तो भयभीत हो गया और पवनपुत्र हनुमान को उनसे मिलने भेजा। हनुमान की राम से औपचारिक भेंट के बाद सुग्रीव और राम की मित्रता हुई और निश्चित हुआ कि राम सुग्रीव का उसके शत्रु-भाई बालि से पीछा छुडवायेंगे और सुग्रीव सीता की खोज में मदद करेंगे। सुग्रीव को पता था कि रावण सीता को दक्षिण दिशा की ओर ले गया है। सीता ने वहाँ अपने पट व आभूषण भी डाले थे, जिससे इस बात की पुष्टि भी हुई।

बालि न केवल अत्यंत शक्तिशाली था; बल्कि वह एक विशेष वरदान से सज्जित भी था, जिसके कारण उसका वध असंभव-सा था। राम ने बड़ी युक्ति से बालि का वध किया, जिससे सुग्रीव को अपनी पत्नी व किष्किंधा का राज वापस मिल गये। बालि के पुत्र अंगद को युवराज पद दिया गया। वर्षा ऋतु आने के कारण सीता की खोज का काम स्थगित करना पड़ा। राम ने लक्ष्मण के साथ पास की एक कन्दरा में वर्षा ऋतु का समय बिताया। गोस्वामी तुलसीदास ने यहाँ वर्षा ऋतु और राम की वियोग-लीला का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। वर्षा ऋतु बीत गई; परन्तु सुग्रीव राम का काम ही भूल गया। यह देखकर लक्ष्मण क्रोधित हुए और सुग्रीव की ओर चले। सुग्रीव को अपनी भूल का अहसास हुआ और सीता की खोज का काम आरंभ हुआ।

सुग्रीव ने अपने वानरों को सभी जगह से बुलाया और उन्हें अलग-अलग दिशाओं में पूरे मार्गदर्शन के साथ भेजा। दक्षिण दिशा में जहाँ सीता के होने की अधिक सम्भावना थी; जामवंत, हनुमान और अंगद जैसे वीरों को भेजा। राम ने हनुमान को अपनी अंगूठी दी; जिसे वे निशानी के रूप में सीता को दे सकें। सभी टुकड़ियाँ चारों दिशाओं में एक माह तक सीता की खोज करती रहीं; किन्तु उन्हें असफलता ही मिली। वे सब शारीरिक और मानसिक रूप से थक चुके थे। दक्षिण की टुकड़ी जैसे-तैसे सागर किनारे पहुँच चुकी थी। वहाँ उनकी मुलाकात गिद्धराज जटायु के बड़े भाई सम्पाती से हुई। उन्होंने सीता के बारे में बता कर वानर टुकड़ी की सारी समस्या ही हल कर दी। उन्होंने बताया कि सीता सागर के उस पार लंका की अशोक वाटिका में हैं।

सागर-तीर से लंका की दूरी सौ योजन थी; जिसे पार करना कठिनाई भरा काम था। जामवंत बूढ़े होने के कारण नहीं जा सकते थे। अंगद जा तो सकते थे; परन्तु उन्हें लौटना मुश्किल प्रतीत हो रहा था। किसी अन्य वानर में सागर लाँघने की क्षमता नहीं थी। इतने में जामवंत ने हनुमान को उनकी शक्ति याद दिलाई, जिसे वे ऋषि-मुनियों के श्राप के कारण भूल गये थे। जब हनुमान को अपनी शक्ति का अहसास हुआ, वे तुरंत सागर लाँघ कर लंका जाने को तत्पर हो गए। वे जामवंत से; वहाँ क्या करना है, इसका आदेश लेते हैं और सागर लाँघने को तत्पर होते हैं।

आध्यात्मिक सार

विश्व के रचयिता एवं त्रिकालदर्शी भी जब मानव तन रख कर पृथ्वी पर अपनी भार्या के लिए वन-वन भटक रहे हों; तब ब्राह्मण रूपी हनुमान से परिचय पूछते हैं तो, 'तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं' एकदम सटीक दिखाई देता है। छोटे भाई की स्त्री, बहिन, पुत्र की स्त्री और कन्या - ये चारों समान हैं। इनको जो कोई बुरी दृष्टि से देखता है, उसे मारने में कुछ भी पाप नहीं होता।

अमीर-गरीब, छोटे-बड़े, ऊँच-नीच के भेदभाव से निपटने के लिए आज के युग में बड़ी-बड़ी बातें होती हैं; किन्तु रामचरितमानस में ऐसे कई प्रसंग हैं; यथा :

- ✓ निम्न जाति की एक भीलनी को राम नवधा भक्ति प्रदान करते हैं।
- ✓ नर-वानर की मित्रता होती है।
- ✓ एक पक्षी (सम्पाती) राम के दूतों को सफलता की राह बताता है।

जीवन में मात्र बल व यौवन ही पर्याप्त नहीं हैं; बल्कि कठिन समय में, बल के साथ बुद्धि और यौवन के साथ अनुभव भी बहुत जरूरी है। इसीलिए हनुमान ने जामवंत की सलाह लेना उचित समझा।

किष्किन्धाकाण्ड अरण्य के बाद पर्वत, गुफाओं, सरोवर और समुद्र के तट तक पहुँचने का काण्ड है। यह प्राणियों के जीवन के आध्यात्मिक उत्थान को दर्शाने का काण्ड है। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भूख, प्यास से विमुख होकर निरंतर गतिशीलता आवश्यक है। तब भी मार्ग न मिले तो अंतर्मन में जाने से ही भगवान की प्रेरणा से अंतर्दृष्टि उजागर होती है और हम सहज रूप से प्रकाशवान हो अपने लक्ष्य की ओर पहुँच जाते हैं। वहाँ भी बुद्धि, विवेक और धीरज के द्वारा कठिनतम परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति प्राप्त होती है। गुरुजन सदा हमारे सहायक बने रहते हैं।

जीवन में उपयोगिता

1. जीवन में अमीर-गरीब, ऊँच-नीच और हर प्रकार के भेदभाव छोड़कर सभी से सप्रेम व्यवहार करना चाहिए। ब्रह्मा और शिव से वरदान पाकर राक्षसराज रावण ने कभी सोचा भी न होगा कि नर-वानर का मेल उसके प्राण भी ले सकता है।
2. बालि के वरदान के कारण यह संभव ही नहीं था कि कोई उसका वध कर सके। ऐसी असंभव-सी अवस्था में, हमें वैकल्पिक उपाय सोचना चाहिये जो उपयोगी हो सके।
3. हर कार्य समय पर ही करना चाहिए। राम चाहते तो सुग्रीव से कहकर, वानरों को सीता की खोज में वर्षा में ही भेज सकते थे; परन्तु ऐसा करने में उन्हें शायद ही सफलता हाथ लगती। इसलिए उन्होंने वर्षा ऋतु के समाप्त होने की प्रतीक्षा की।
4. सुग्रीव ने अपने भौगोलिक ज्ञान का उपयोग करते हुए जैसे वानरों को उनकी योग्यता के अनुसार अलग-अलग स्थानों पर भेजा था, वैसे ही हमें हमारे कार्यों को योजनाबद्ध तरीके से करना चाहिए।
5. कार्य प्रणाली में नियंत्रण-रेखा के भीतर रहना परियोजना की सफलता के लिए अत्यंत जरूरी है। इसीलिए हनुमान ने वही करना चाहा जो जामवंत ने कहा।

21

सुन्दरकाण्ड (आरंभ - दोहा 28)

संजना मिश्रा

कथा सार

जामवंत के वचन सुनकर हनुमान सीता माता की खोज में लंका की ओर उड़ चलते हैं; परंतु देवता उनकी परीक्षा अनेक विघ्नों के माध्यम से लेते हैं, जिसके अंतर्गत - सुरसा नामक सर्पों की माता का अपने लघु और विशाल स्वरूप द्वारा छाया-बंधन, सिंहिका राक्षसी का वध तथा लंकिनी नामक राक्षसी को अपने मुष्ठिका प्रहार के द्वारा परास्त करना सम्मिलित हैं। हनुमान लंका पहुँचते हैं, जहाँ राक्षसों के झुण्ड घूमते-घूमते पशुओं का भक्षण कर रहे हैं। इसी दृश्य के मध्य उन्हें एक ऐसा महल भी दिखायी देता है जहाँ मंदिर व तुलसी के वृक्ष भी लगे हैं। वहाँ उनकी भेंट विभीषण से होती है, और हनुमान उन्हें राम कथा सुनाते हैं।

विभीषण से भेंट के बाद वे अशोक वाटिका आते हैं, जहाँ सीता अशोक वृक्ष के नीचे रघुनाथ-स्मरण में लीन हैं। तभी रावण वहाँ आता है और उन्हें अपने महल में रहने के लिये प्रलोभन देता है; परंतु जानकी तिनके की आड़ में उसका अस्तित्व जुगनू के समकक्ष बताती हैं, जिससे वह क्रोधित हो जाता है; पर मंदोदरी स्थिति संभाल लेती हैं। वहीं पर त्रिजटा भी उपस्थित है, जो सीता के असह्य विरह की साक्षी है। तभी हनुमान उनके सामने अंगूठी, जो वे राम से चिह्न स्वरूप लाये थे डाल देते हैं, जिसे सीता पहचानकर हर्ष भाव से भर जाती हैं। हनुमान उनकी व्याकुलता देखकर उनके सामने प्रकट होकर उपस्थिति का प्रयोजन भी बताते हैं। सीता के नेत्रों से प्रेमाश्रु गिरने लगते हैं। वे स्वयं के प्रति राम की स्मृति को लेकर जो शंका करती हैं, उसे भी वे प्रेमपूर्वक दूर करते हैं और धैर्य धारण करने को कहते हैं। फिर सीता माता का आशीर्वाद लेकर फल खाते हुए अशोक वाटिका उजाड़ने लगते हैं।

जब रावण तक ये सूचना पहुँचती है तो वह अपने पुत्र अक्षय कुमार को भेजता है; परन्तु पुत्र-वध के समाचार सुनकर रावण बड़े पुत्र मेघनाद को भेजते हैं जो कि हनुमान पर ब्रह्मास्त्र चलाता है, जिससे मूर्छित होने पर वह उन्हें नागपाश में बाँध कर रावण के सम्मुख ले जाता है। रावण जब हनुमान से उसका परिचय पूछता है तो वे श्रीराम की महिमामयी गौरव-गाथा बताकर अंत में कहते हैं, जिसकी पत्नी को तुम 'हर' ले आये हो मैं उन्हीं का दूत हूँ। इसके उपरांत हनुमान रावण से जानकी को वापस लौटा देने की याचना के साथ श्रीराम के चरणकमलों को हृदय में धारण करने की सलाह देते हैं। हनुमान तरह-तरह से रावण को समझाने का प्रयास कर रहे हैं; परंतु रावण को अपने अभिमान के आगे हर बात का अस्तित्व नगण्य लगा और उसने हनुमान से कहा कि तेरी मृत्यु निकट है; पर हनुमान ने कहा - यह तेरा मतिभ्रम है, इसका उल्टा ही होगा। रावण को कुपित देखकर राक्षस हनुमान को मारने दौड़े; परंतु विभीषण की दूत को न मारने की सलाह मानकर रुक गये। रावण ने वानर की ममता पूँछ में जानकर उसमें आग लगाने को कहा, जिसे सुन हनुमान मुस्कराये और अपनी पूँछ को अत्यधिक बढ़ा लिया। उसमें जब आग लगी तो उन्होंने तुरंत अपना रूप बहुत छोटा कर लिया। उसी समय भगवान की प्रेरणा से उन्चासों पवन चलने लगे; हनुमान अट्टहास करते हुये एक महल से दूसरे महल पर कूदते रहे और क्षण भर में सारा नगर जलने लगा; किंतु विभीषण का घर बच गया। इसके बाद उन्होंने समुद्र में कूदकर आग बुझा ली। फिर छोटा-सा रूप धारण कर जानकी के पास आते हैं और उनसे चिह्न स्वरूप चूड़ामणि लेकर भारी गर्जना के साथ वहाँ से चल देते हैं। उस भारी गर्जना से राक्षसों की स्त्रियों के गर्भ गिरने लगते हैं। समुद्र पार

करके लौट आते हैं और सब वानर हनुमान से मिलकर हर्षित हो जाते हैं। अंगद की सम्मति से सब मधुवन के भीतर आकर फल खाने लगते हैं।

आध्यात्मिक सार

अध्यात्म एक दर्शन, चिंतन और विद्या है। सुन्दरकाण्ड कथा-रूप में मन को आनंदित करने की औषधि स्वरूप है; परंतु वह हम सबके मन में सुवासित होकर जीवन में बिखर जाये इसके लिये इसका आध्यात्मिक पक्ष जानना आवश्यक हो जाता है। सरल होकर कठिन लक्ष्य की प्राप्ति और फिर पुनः अपने सरल स्वरूप में आ जाना ही जीवन के उतार-चढ़ावों को पार करने का उपाय है। हनुमान कठिन से कठिन लक्ष्य भेद कर फिर अपने स्वरूप में लौट आते हैं; क्योंकि उपलब्धि वही सार्थक है जो हमें विनम्रता प्रदान करे। सुरसा क्या है? यदि विचार करें तो हमारी असंख्य इच्छाओं और कामनाओं का पुंज है, जो निरंतर हमें अपनी ओर खींचता है; परंतु हनुमान का अपने स्वरूप को छोटा करना उन इच्छाओं व आवश्यकताओं की सीमितता का बोध कराता है। सुंदरकाण्ड की सुंदरता हनुमान के सुन्दर भावों में निहित है। वे कर्त्ता भाव से कार्य नहीं करते। वे निर्भय होकर कर्त्तव्य वहन कर रहे हैं। मृत्यु का भय ही कार्यसिद्धि में बाधा उत्पन्न कर देता है। मंथन करने पर हम पाते हैं कि आत्मविश्वास और निष्ठा जीवन के ऐसे प्रकाश-स्तंभ हैं, जो बड़े से बड़े अंधकार को चीरने में सक्षम है। आत्मविश्वास यानी कि ईश्वर पर विश्वास। हमारे जीवन में कितना भी अंधकार हो, आत्मविश्वास से भरा एक मजबूत कदम दूसरे कदम के लिये मार्ग तैयार करता है। हमारे भावों में निष्ठा होने के साथ-साथ कर्मों में भी निष्ठाभाव ही होना चाहिये और यह तभी संभव है जब हम अपना मन व ध्यान उस क्षण में किये जाने वाले कार्य के प्रति एकाग्रचित्त करते हैं। हनुमान की कार्यशैली बताती है कि एकाग्रचित्तता एक साधना है।

जीवन में उपयोगिता

1. जीवन में कितना भी विपरीत समय हो; परन्तु सकारात्मकता बनाये रखना अनिवार्य है।
2. भक्ति के साथ विवेक और युक्ति का समावेश होना आवश्यक है।
3. मन को भटकने से रोकने के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है।
4. जीवन में मति-भ्रम को दूर करके लक्ष्य की स्पष्टता होना आवश्यक है ।
5. प्रयास एक सतत साधना है।
6. समय, व्यक्ति व परिस्थिति के अनुसार कार्य करना ही सच्ची शिक्षा है।

22

सुन्दरकाण्ड (दोहा 28 - 60)

संजना मिश्रा

कथा सार

सुग्रीव हनुमान समेत सभी वानरों को साथ लेकर राम से मिलते है। फिर हनुमान अपनी लंका यात्रा का वर्णन करते हैं। सीता जी की दशा का वर्णन सुनकर वे करुणा से भर उठते है और इसके साथ ही रघुनाथ लंका प्रस्थान के मंतव्य से सुग्रीव को परिचित कराते हैं और सुग्रीव रामशक्तिपूरित सेना तैयार करते हैं। इसकी खबर जब लंका में पहुँचती है तो मंदोदरी व्याकुल होकर रावण से सीता को वापस करने को कहती है; परन्तु रावण उसकी एक नहीं सुनता। रावण के मंत्री तो मृत्युभय से सही सलाह नहीं देते हैं; परन्तु विभीषण रावण को श्रीराम की अनंत शक्ति के विषय में बताते हैं और कहते हैं - वे तीनों लोकों के स्वामी हैं। माल्यवान भी विभीषण का समर्थन करते हैं; परंतु रावण की कुमति के आगे उनकी याचना का कोई अर्थ नहीं है। रावण विभीषण को लात मार देते हैं। विभीषण तब भी रावण को पिता का स्थान देते हुये प्रभु-शरण में जाने की सलाह देते हैं। विभीषण श्रीराम के पास चले जाते हैं।

विभीषण के आने की खबर पाकर राम-सेना में सब सशंकित हो जाते हैं। सुग्रीव इसे शत्रु की चाल समझते हैं; पर राम का स्नेही हृदय उनकी शंका का समाधान करता है। विभीषण प्रभु को देखकर स्तब्ध रह जाते हैं और उनके नयनों में प्रेमाश्रु भर आते हैं। वे अपने हृदय के उद्गार प्रेषित करते राक्षस तन; परंतु निश्छल मन का परिचय देते हैं। विभीषण राम के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं। राम प्रमाण स्वरूप काकभुशुण्डि, शिव और पार्वती का नाम लेकर कहते हैं- जो छल, कपट, मद, मोह को त्याग कर मेरे पास आता है, जो हर्ष, शोक से भयभीत नहीं है, वह मेरे हृदय पर राज करता है। विभीषण अभिभूत होकर पवित्र भक्ति माँग लेते हैं और प्रभु उन्हें वरदान के साथ में लंका का अखंड राज्य भी प्रदान कर देते हैं। इसके उपरांत प्रभु सुग्रीव व विभीषण से समुद्र पार करने का उपाय पूछते हैं। विभीषण प्रभु को समुद्र से प्रार्थना करने की सलाह देते हैं। जिसकी प्रभु प्रशंसा करते हैं; परंतु लक्ष्मण को यह बात नहीं भाती। प्रभु उन्हें भी आश्वस्त करते हैं।

इधर रावण ने अपने दूत भेजे जो वानर के रूप में आते हैं और प्रभु राम के गुणों का बखान करने लगते हैं। वे पकड़े जाते हैं; परंतु जब वे लक्ष्मण के पास लाये जाते हैं तो छोड़ दिये जाते हैं। रावण उनसे बिना कुछ जाने ही अपनी सुप्त चेतना से अभिप्रेरित होकर विभीषण और प्रभु राम की सेना पर तरस खाता है; परंतु वे दूत रावण की आशाओं के विपरीत राम की विविधता से भरी हुयी सेना का बखान करते हैं। विभीषण के राजतिलक के बारे में बताते हैं तथा अपने कष्ट भी बताते हैं। इसके बाद भी वे रूकते नहीं और राम की सेना के अतुलनीय पराक्रम का बखान करते रहते हैं। वे कहते हैं कि समुद्र पार करने का उपाय प्रभु ने आपके भाई से पूछा, जबकि अपने एक बाण से वे उसके अस्तित्व को नष्ट कर सकते थे; परंतु अहंकार में धँसा रावण हँसता है और दूतों से कहता है कि झूठी प्रशंसा मत करो। तभी दूत लक्ष्मण द्वारा दी गयी संदेश पत्रिका देते हैं, जिसमें लक्ष्मण ने रावण को चेतावनी के साथ-साथ प्रभु के चरणों में स्थान पाने की सलाह भी दी है| रावण भयभीत होता है; परंतु मुख पर नहीं आने देता|

इधर जब समुद्र प्रभु राम की विनती को ठुकरा देते है, तब राम क्रोधित होकर धनुष उठाते हैं, जिससे समुद्र अभिमान छोड़कर क्षमा माँगता हैं और प्रभु के प्रति कृतज्ञ हो जाता है। प्रभु समुद्र से सेना के पार उतरने का उपाय पूछते

हैं। समुद्र नल व नील नाम के दोनों वानर भाइयों की विशेषता बताते हैं कि उनके स्पर्श मात्र से पहाड़ भी समुद्र में तैर जायेंगे। फिर समुद्र प्रभु के चरणों की वंदना करके चला जाता है।

आध्यात्मिक सार

बुद्धि एक जन्मजात गुण है; परंतु सत् और असत् का निर्णय करने वाली सुबुद्धि अर्थात् विवेक हमारी शिक्षा, वातावरण और संगति के ही द्वारा जाग्रत होता है। यदि पत्थर पर प्रहार करना है तो केवल छेनी से ही पत्थर नहीं टूटेगा, बल्कि उसके साथ विवेक रूपी हथौड़ी का होना भी आवश्यक है जो छेनी पर सही दिशा और दशा में प्रहार करती है। हमारी बुद्धि मार्ग निर्देशित करती है; परंतु विवेक हमें मार्ग पर चलने का सही तरीका बताता है। विभीषण का प्रभु शरण में आना, प्रभु को समुद्र से प्रार्थना के लिये कहना और राम द्वारा लक्ष्मण के आवेश को समझना; परंतु उसके अनुसार कार्य न करना प्रदर्शित करता है कि सही परिणाम बुद्धि के साथ विवेक के संगम पर ही प्राप्त होते हैं। सत्य की स्वीकृति अहंकार का नाश करती है और हम भाव, विचार, व्यक्ति या ईश्वर के प्रति समर्पित हो जाते हैं। जिस प्रकार चित्र में रंगों द्वारा बनायी गयी नदी या वृक्ष कल्पना के क्षणिक विराम के द्योतक हैं, वे नदी की शीतलता और वृक्षों द्वारा प्रदत्त वायु के अस्तित्व को नहीं बता सकते, केवल उनको खुली आँखों से देखने और अनुभव करने पर ही हम उन्हें महसूस कर पाते हैं; उसी प्रकार प्रभु राम अपनी काया तक ही सीमित नहीं है, जिसको देखकर रावण अपनी ताकत पर अहंकार कर रहा है, बल्कि प्रभु राम तो शक्ति, संयम और विशालता के भाव का अथाह सागर हैं, जिनकी छाया मात्र से ही हमारे भीतर सजगता, सकारात्मकता व समर्पण के भावों का सर्जन हो जाता है और हम जीवन के आनंद का रसपान करते हैं।

जीवन में उपयोगिता

1. जीवन-यज्ञ रुपी कुण्ड में कर्मों की सच्ची आहुति स्वयं ईश्वर के निकट ले जाती है।
2. स्वयं की भूलों को स्वीकारना आत्मग्लानि का नहीं, बल्कि आत्मबल का परिचय है।
3. जीवन में स्वयं अपने मार्ग निर्मित करने चाहिए। छोटे और बने बनाये मार्ग पर चलकर लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है।
4. सोने की नगरी लंका नहीं बच पायी; परन्तु प्रकृति की गोद में राम और उनकी सेना का सुरक्षित रहना दर्शाता है कि प्रकृति हमारी संरक्षक है और पोषक भी। अतः उसका संरक्षण व सम्मान हमारा धर्म है।

23

लंकाकाण्ड (आरंभ - दोहा 35)

राम मल्लिक

कथा सार

राम ने आदेश किया कि अविलंब सेतु का निर्माण करो, ताकि सेना पार उतरे। जामवंत ने नल-नील को बुलाया और कहा कि श्री राम के प्रताप का मन में स्मरण कर सेतु बनाओ और सभी वानर-भालू समूहों को भी इसमें सहयोग करने का आदेश दिया। बहुत शीघ्र सेतुनिर्माण कार्य संपन्न हुआ। सेतुनिर्माण के बाद राम ने रामेश्वर शिवलिंग की स्थापना कर उनकी विधिवत पूजा की। यहाँ राम ने श्री रामेश्वर की पूजा के तीन विधान बताये हैं और इसी बहाने जीव को परमार्थरूप से प्राप्त होने वाली निम्न स्थितियों का वर्णन किया :-

1. जो रामेश्वर के दर्शन करते हैं वे शरीर छोड़कर मेरे लोक को प्राप्त होंगे।
2. जो गंगाजल लाकर इन पर चढ़ायेंगे उनको सायुज्य मुक्ति प्राप्त होगी।
3. जो व्यक्ति यहीं पर रहकर निष्काम और छलरहित भाव से सेवा करता रहेगा, उसे शंकर जी राम की पराभक्ति प्रदान करेंगे।
4. सेतुदर्शन मात्र से लोग भवसागर से पार हो जायेंगे।

सेना पुल से पैदल, जलचरों पर सवार होकर और आकाश मार्ग से लंका पहुँची। रावण सेतु बनने और राम की सेना के लंका आगमन का समाचार पाकर अति व्याकुल हो गया। मंदोदरी उसे प्रेम से समझाने और राम के ईश्वर होने का प्रमाण देने लगी। वे समझाती हैं कि वह सीता जी को राम को वापस सौंप दे। रावण अपनी प्रभुता का वर्णन कर उसे सांत्वना देता है और सभा में चला जाता है। रावण के पुत्र प्रहस्त ने भी उसे समझाया पर रावण ने एक न मानी।

उधर राम लक्ष्मण, विभीषण व अन्य मंत्रियों से सलाह करते हैं। दूसरी ओर रावण विनोद में मग्न है। राम दक्षिण दिशा में छाये बादल और बिजली की चमक की ओर विभीषण को इशारा करते हैं। विभीषण समझाते हैं कि रावण के सिर पर मेघडंबर छत्र है जैसे बादलों की अत्यंत काली घटा हो। मंदोदरी के कानों में जो कर्णफूल हैं, वही बिजली है। आवाज़ ताल और मृदंग की है। राम ने एक ही बाण में रावण के सिर का छत्र और मंदोदरी के कानों के कर्णफूल पृथ्वी पर गिरा दिये। रावण की सभा में सब भयभीत हो गये और इसे बड़ा अपशकुन माना। रावण ने सब को समझाने का प्रयास किया। मंदोदरी सजल नयन हाथ जोड़कर रावण से कहती है कि आप राम का विरोध छोड़िये, उन्हें मनुष्य जानकर हठ न करें। रावण इस कथन पर हँस पड़ता है और कहता है कि कवियों ने नारी के स्वभाव पर सत्य ही कहा है कि उनके हृदय में ये आठ दोष सदा रहा करते हैं - साहस, झूठ, चंचलता, माया, डर, अज्ञान, अपवित्रता और निर्दयता।

युद्ध आरंभ हो, उसके पहले राम अंगद को दूत बनाकर रावण से बातचीत के लिये भेजते हैं। अंगद नगर में प्रवेश करते ही रावण के पुत्र का वध करते हैं। रावण की सभा में अंगद अपना परिचय देते हुए रावण की अपने पिता से मित्रता का उल्लेख करते हैं। वे राम के प्रताप का वर्णन करते हैं और कहते हैं - प्रभु राम तुम्हारे सब अपराध क्षमा कर देंगे; यदि तुम सादर जानकी जी को आगे रख उनके पास शरणागत होकर क्षमा याचना करो। रावण और अंगद के बीच कटु वार्तालाप होता है। रावण राम के लिये भी अपशब्द कहता है। अंगद ने क्रोधित होकर अपने दोनों भुजदंड धरती पर दे मारे, जिससे धरती हिल गयी और सब सभासद धरती पर गिर पड़े। रावण भी गिरते-गिरते सँभलकर उठा; लेकिन उसके मुकुट धरती पर गिर गये। अंगद ने चार मुकुट उठाकर राम के पास भेज दिये। अंगद ने राम की महिमा का वर्णन

किया और कुपित होकर सभा के मध्य में पैर जमा कर कहा, यदि तुम मेरा चरण हटा सको तो श्री राम लौट जायेंगे, मै सीता जी को हार जाऊँगा। मेघनाद आदि बलवान भी इसमें असफल रहे। रावण स्वयं सामने आया पर अंगद ने उसे राम के चरण पकड़ने की सलाह दी। अपमान और नीति की बात कहकर वे सभा से चल दिये और हर्षित होकर राम के पास पहुँच गये और उनके चरणों को पकड़ लिया। उधर रावण दुखी होकर अपने महल चला गया।

आध्यात्मिक सार

राम ने लिंग की स्थापना करके विधिवत पूजा की। शिवलिंग के मूल में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु और ऊपर महादेव का निवास होता है और प्रणव-ओंकार ही उनका मुख है। लिंगवेदी साक्षात् महादेवी हैं और लिंग साक्षात महेश्वर हैं। इसलिये उनकी पूजा करने से ईश्वर के पूर्ण रूप की पूजा हो जाती है।

यहाँ सागर पार जाने के तीन मार्ग बताये गये हैं - सेतु द्वारा, आकाश मार्ग से और जलचरों पर चढ़ कर। आध्यात्मिक साधना के दृष्टिकोण से संसासागर से भी पार जाने के तीन मार्ग हैं। कर्म का मार्ग जलचरों वाला मार्ग है, इसमें फिसलने का बहुत भय है। ज्ञानी मार्ग आकाश मार्ग है क्योंकि इसमें मन का कोइ आधार नहीं रहता और यह कठिन साधना का मार्ग है। उपासना का मार्ग सेतु मार्ग है; इसमें कोई भय नहीं है। इस पर से बड़े-छोटे सभी जा सकते हैं। इसमें डूबने का भय नहीं अर्थात कोई विघ्न नहीं है।

अंगद का प्रसंग ईश्वर के प्रति अडिग विश्वास को दर्शाता है, जिसके कारण मनुष्य धुरंधर बलवानों का भी बिना डिगे सामना कर सकता है। रावण दुराचार का प्रतीक है और उसका छत्र, मुकुट, मंदोदरी का कर्णफूल गिरना दुराचारी के पतन और पराजय का प्रतीक है।

जीवन में उपयोगिता

1. कार्य की योजना तैयार करने के बाद बिना विलम्बके कार्यान्वयन आवश्यक है। एक कुशल प्रबंधक की तरह समय और कार्यक्रम पर सतत ध्यान रखना चाहिए |
2. भगवान का स्मरण करके और उनको चित्त में रखकर कार्य करने से आसानी से सफलता प्राप्त होती है।
3. किसी के कार्य को छोटा नहीं समझना चाहिये। सबका सम्मान करना चाहिये।
4. विपक्षी की शक्ति और क्षमता का आकलन करने के बाद ही उससे वैर करना चाहिये।
5. उचित सलाह को मानना चाहिये नहीं तो हानि होती है। सलाहकार के चयन में सावधानी रखनी चाहिये। उसे उचित सलाह के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये।
6. भगवान की निंदा करने वाले का प्रतिकार करना चाहिये और वहाँ से दूर हो जाना चाहिये।
7. दूत को अपने स्वामी की वास्तविक मनसा को समझकर उसी के अनुसार कार्य करना चाहिए।

24

लंकाकाण्ड (दोहा 35 - 71)

राम मल्लिक

कथा सार

अंगद के लंका के कार्यकलाप से मंदोदरी बहुत दुःखी और व्याकुल थी। उसके पुत्र की हत्या और रावण की सभा में अपमानजनक व्यवहार ने उसे व्याकुल कर दिया था। उसने रावण से कहा - मन में निश्चय करके कुमति को छोड़ दो । तुम्हारा राम से युद्ध शोभा नहीं देता। राम के छोटे भाई ने एक छोटी सी लकीर खींची थी, उसे भी तुम नहीं लाँघ सके। हनुमान ने खेल-खेल में समुद्र लाँघा और यहाँ आकर वन उजाड़ दिया। पुत्र अक्षयकुमार को मारा और नगर को जला दिया; तबतुम्हारा बल कहाँ था? मेरी बात पर विचार करना चाहिये। राम को तुम नरपति मत समझो। वे सम्पूर्ण चराचर के स्वामी हैं और उनका बल अतुलनीय है। दुःख की बात है कि तुमने राम का विरोध किया। काल-विवश होने के कारण बोध की उत्पत्ति नहीं होती है। मंदोदरी के उपदेश का रावण पर कोई असर नहीं हुआ।

राम ने अंगद को बुलाया और पूछा - तुमने रावण के चार मुकुट मेरे पास फेंके वे तुमने किस प्रकार पाये? अंगद ने उत्तर दिया - वे मुकुट नहीं हैं; बल्कि राजाओं के चारों गुण साम, दाम, दंड और भेद हैं। रावण धर्महीन, प्रभुचरण से विमुख और काल के विशेष वश में है, इसलिये उसको छोड़कर वे गुण आपके पास चले आये। अंगद ने फिर लंका के समाचार कहे। राम ने मंत्रियों के साथ विचार किया कि किस तरह आक्रमण किया जाए। निर्णय हुआ कि लंका में चार बड़े द्वार हैं, जहाँ चार टोलियों को लगा दिया जाए।

वानर-भालु-सेना ने लंका को चारों ओर से घेर लिया। दोनों पक्षों में भीषण मार-काट हुई। पश्चिमी द्वार पर मेघनाद था; जहाँ वानर-सेना में हाहाकार मचा था। हनुमान वहाँ गए और एक पहाड़ लेकर मेघनाद पर धावा बोल दिया; उसका रथ तोड़ दिया; उसके सारथी को मार डाला और मेघनाद की छाती पर लात मारी। दूसरा सारथी उसे व्याकुल जानकर दूसरे रथ में तुरंत घर ले आया। इधर फिर राक्षस और वानर योद्धा भिड़ गये। राक्षस सेनापति अकंपन और अतिकाय ने अपनी सेना को विचलित देखकर माया की। पलभर में घना अन्धकार छा गया। खून, पत्थर और राख की वर्षा होने लगी। राम को पता चला तो अंगद व हनुमान को वापस भेजा। फिर राम ने अग्नि-बाण चलाया, जिससे कहीं अँधेरा नहीं रह गया। पहले दिन के युद्ध में रावण की आधी सेना मारी गई। रावण ने सचिवों का विचार पूछा। रावण के नाना माल्यवंत ने कहा कि राम से विमुख होकर किसी ने सुख नहीं पाया I अत: तुम उनसे बैर छोड़कर सीता को वापस कर दो। यह बात रावण को अच्छी नहीं लगी और उनको अपमानित कर निकाल दिया।

प्रातःकाल वानरों ने पुनः आक्रमण किया। मेघनाद माया से अदृश्य होकर वानरों को घायल करने लगा। वानरों को व्याकुल देख लक्ष्मण उससे युद्ध करने चले। दोनों में घमासान युद्ध हुआ। जब मेघनाद ने देखा कि लक्ष्मण उसे मार डालेंगे तो उसने उन पर शक्ति का प्रयोग किया। शक्ति के लगते ही लक्ष्मण मूर्च्छित हो गये। हनुमान उन्हें उठाकर राम के पास ले आये। उनकी हालत देखकर राम व्याकुल हो गये। हनुमान लंका से सुषेण वैद्य को लाये और उनके कहने पर संजीवनी बूटी लेने के लिये चले। रावण ने हनुमान को मार्ग में रोकने के लिये कालनेमि राक्षस को भेजा; किन्तु वह हनुमान द्वारा मारा गया। हनुमान संजीवनी बूटी पहचान नहीं पाये और बूटी समेत पर्वत उठाकर लंका वापस आने लगे।

रास्ते में अयोध्या के ऊपर पहुँचे। भरत ने उन्हें राक्षस समझकर धनुष पर बिना नोक का बाण रखकर मारा । हनुमान मूर्च्छित होकर गिर पड़े। उनके द्वारा राम का स्मरण सुन भरत दौड़कर उनके पास पहुँचे। उन्हें व्याकुल देख हृदय से लगा लिया। मूर्च्छा टूटने पर हनुमान ने उन्हें सब समाचार सुनाया। भरत पश्चात्ताप करने लगे; फिर हनुमान से कहा कि तुम पर्वत सहित मेरे बाण पर बैठ जाओ, मैं तुम्हें श्रीराम के पास भेज दूँगा। हनुमान ने कहा मैं स्वयं ही बहुत शीघ्र चला जाऊँगा।

उधर लंका में लक्ष्मण को राम ने हृदय से लगा लिया और विलाप करने लगे - तुम्हारे बिना मैं जीवित नहीं रहूँगा। राम का प्रलाप सुन वानर व्याकुल हो गए। इतने में हनुमान आ गए। राम हर्षित हो उनसे मिले। वैद्य ने औषधि का प्रयोग किया। लक्ष्मण उठ बैठे। राम ने लक्ष्मण को हृदय से लगा लिया। रावण ने यह समाचार सुना तो व्याकुल होकर कुम्भकर्ण के पास आया और उसे जगाकर सब समाचार सुनाये। कुम्भकर्ण ने कहा - तुमने अच्छा नहीं किया। राम के रूपगुण का स्मरण कर एक क्षण के लिये वह प्रेम में लीन हो गया। कुम्भकर्ण ने वानरसेना पर आक्रमण किया और उसे रौंद डाला। उनकी करुण आवाज़ सुन राम आगे आये और अपने बाण से कुम्भकर्ण का सिर काट दिया। उसका सिर रावण के आगे गिरा। रावण सिर को गोद में लेकर विलाप करने लगा।

आध्यात्मिक सार

मंदोदरी के बार-बार समझाने पर भी रावण को बोध नहीं होता। यहाँ एक आध्यात्मिक बात है कि काल हाथ में डंडा लेकर किसी को नहीं मारता। जब वह किसी को मारना चाहता है तो उसके धर्म, बल, बुद्धि और विचार को हर लेता है। ज्ञान का उदय होने से सब प्रकार के संदेह दूर हो जाते हैं। भ्रम-संदेह अंधकार की स्थिति है; क्योंकि उसमें कुछ समझ नहीं पड़ता। आध्यात्मिक दृष्टि से देखें तो अज्ञान फैलाना तो बहुत आसान है; लेकिन ज्ञान फैलाना कठिन है। उसके लिये तो भगवान की शक्ति चाहिये ।

जीवन में उपयोगिता

1. मंदोदरी बड़े साहस के साथ रावण को उसकी भूलें समझाने का प्रयास करती है। हर पत्नी को इस प्रकार अपने सत्कर्तव्य के लिये साहस रखना चाहिये।
2. भरत हनुमान को पर्वत समेत अपने बाण पर बिठाकर राम के पास भेजने का प्रस्ताव रखते हैं; परन्तु हनुमान मना कर देते हैं। लोगों को अपनी शक्ति और सामर्थ्य पर भरोसा करना चाहिये ।
3. मनुष्य की मूल प्रवृत्ति तो निर्मल रहती है; किन्तु आलस्य, नशा और मांसाहार के प्रभाव से आसुरी वृत्ति उभारकर मनुष्य कुकृत्य करने लगता है।
4. मेघनाद विपरीत परिस्थितियों में भी पिता का साहस और आत्मविश्वास बढ़ाता है ।
5. राम भ्रातृप्रेम का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। लक्ष्मण की मृत्यु की आशंका में दुःखी हो विलाप करते हैं।
6. परिवार में आपसी सम्बन्ध व पारिवारिक मूल्य महत्वपूर्ण हैं; किन्तु धर्म, सदाचार व मानवता को सर्वोपरि मानना चाहिए.

25

लंकाकाण्ड (दोहा 71 - 103)

नीलम झा

कथा सार

रावण को कुम्भकर्ण की मृत्यु के बाद विलाप करते देखकर मेघनाद ने कहा - "आप कल मेरा पुरुषार्थ देखना" और वह आकाश मार्ग से चला गया। अगले दिन वह लक्ष्मण, सुग्रीव और विभीषण के शरीर को बाणों से छलनी कर राम से लड़ने लगा। उसके द्वारा छोड़े गए बाण सर्प बन कर उन्हें लगते, रण की शोभा बढ़ाने के लिए राम ने स्वयं को नागपाश में बाँध लिया।

मेघनाद द्वारा सेना को दुर्वचन कहने पर जाम्बवान ने उसे ललकारा; मेघनाद ने त्रिशूल चलाया। जाम्बवान ने उसी त्रिशूल से मेघनाद की छाती पर मारा; परंतु वरदान के प्रताप से जब वो नहीं मरा तो जाम्बवान ने उसके पैरों को पकड़ लंका में फेंक दिया। तभी गरूड़ आए व मायावी सर्पों को खा गए। उधर मूर्च्छा टूटने पर मेघनाद अजेय यज्ञ करने गुफा में चला गया। विभीषण के सुझाव पर राम ने अंगद, हनुमान, नल, नील, सुग्रीव, विभीषण व लक्ष्मण द्वारा यज्ञ का विध्वंस करवाया। इसके बाद मेघनाद और लक्ष्मण में युद्ध हुआ। अंततः मेघनाद मारा गया।

पुत्र की मृत्यु की खबर सुनकर रावण बेहोश हो गया। मन्दोदरी विलाप करने लगी। होश में आते ही रावण ने अपने योद्धाओं से रीछों-वानरों को मसलने को कहा व स्वयं दोनों भाइयों को मारने चल पड़ा। युद्धभूमि में रावण को रथ पर और राम को बिना रथ के देख विभीषण अधीर हो गए। वे राम से कहने लगे कि आपके पास न रथ है, न तन की रक्षा करने वाला कवच है और न ही जूते हैं; ऐसे आप रावण को कैसे जीत पाएँगे? राम ने कहा कि जिस रथ से विजय होती है; उस रथ के पहिये शौर्य और धैर्य, सत्य और शील उसकी ध्वजा, बल-विवेक-दम और परोपकार उसके घोड़े होते हैं; जो क्षमा, दया और समता रूपी डोरी से रथ में जुड़े होते हैं। ईश्वर का भजन सारथी, वैराग्य ढाल, संतोष-दान फरसा, बुद्धि शक्ति और श्रेष्ठ विज्ञान धनुष के रूप में होता है। निर्मल अचल मन तरकश; शम, यम और नियम बाण के समान होते हैं। ब्राह्मणों और गुरु का पूजन अभेद्य कवच है। हे सखा! ऐसा रथ जिसके पास हो, वह दुर्जेय शत्रु को भी जीत सकता है। प्रभु के वचन सुन कर विभीषण का भ्रम दूर हुआ।

इधर रावण बाणों का संधान कर वानरों और लक्ष्मण पर छोड़ने लगा। लक्ष्मण ने सभी बाणों के सौ टुकडे कर दिए। रावण के सारथी को मारकर रथ को तोड़ दिया। फिर रावण ने ब्रह्मा जी द्वारा दी गई शक्ति चलाई, जिससे लक्ष्मण जी बेहोश हो गए। हनुमान लक्ष्मण को राम के पास ले गए। राम द्वारा प्रेरणास्पद वचन सुनते ही लक्ष्मण उठ गए। उन्होंने बड़ी फुर्ती से रावण के रथ को चूर-चूर कर सारथी को मार दिया व रावण के हृदय को बाणों से छलनी कर दिया। रावण पृथ्वी पर गिर पड़ा। दूसरा सारथी उसे लंका ले गया। होश में आते ही रावण पुनः अजेय यज्ञ करने लगा। विभीषण की सलाह पर राम ने वानरों द्वारा रावण के यज्ञ का विध्वंस करवाया।

पुनः युद्ध होने लगा। इंद्र ने राम के लिए अपना रथ भेजा। रावण की माया के कारण वानरों और लक्ष्मण को कई राम एक साथ दिखने लगे। राम ने रावण की चाल समझकर सारी माया हर ली। उन्होंने रावण के सारथी व घोड़ों को मारकर रथ को चूर-चूर कर दिया। राम ने रावण की सभी भुजाओं और सिरों पर एक साथ बाण चलाए। फलतः वे कटकर

पृथ्वी पर गिर पड़े; लेकिन हर बार सिर और हाथ कटते ही नये हो जाते। रावण द्वारा विभीषण पर परम शक्ति छोड़ने पर राम ने वह शक्ति स्वयं सह ली। विभीषण और रावण में मल्लयुद्ध होने लगा। हनुमान भी रावण से भिड़ गए। रावण अनेक रूप प्रकट कर सबको विचलित करने लगा। उसने हनुमान सहित सभी वानरों को मूर्च्छित कर दिया। पर जाम्बवान द्वारा छाती में लात लगने से वह बेहोश हो गया। सारथी रावण को रथ में डाल कर ले गया।

उस रात त्रिजटा ने सीता को सारी कथा बताई। कथा सुन कर सीता भयभीत हो गई। सीता ने त्रिजटा से पूछा, "सम्पूर्ण विश्व को दुख देने वाला रावण कैसे मरेगा?" त्रिजटा ने कहा, "हृदय में बाण लगते ही रावण मारा जाएगा पर प्रभु उसके हृदय में बाण इसलिए नहीं मारते; क्योंकि उसके हृदय में आप बसती हैं। जब उसके हृदय से आपका ध्यान हट जाएगा, तो राम उसे मार डालेंगे।" फिर त्रिजटा चली गई।

अगली सुबह पुनः रावण रणभूमि में प्रचंड माया दिखाने लगा। यह देख विभीषण ने राम से कहा - "इसकी नाभिकुंड में अमृत का वास होने के कारण यह बारम्बार जीवित हो जाता है।" अब राम ने रावण की नाभि पर बाण छोड़े व रावण का अंत हो गया। अंतिम समय में रावण गरज कर बोला -"राम कहाँ है?" रावण की भुजाओं व सिरों को मंदोदरी के सामने रखकर राम के बाण तरकश में वापस आ गए। रावण का तेज प्रभु राम के मुख में समा गया। देवगण राम की जय-जयकार करने लगे। उधर पति के सिर को देख कर मंदोदरी पृथ्वी पर गिरकर यह कहकर विलाप करने लगी कि जिसने अपने बल से यमराज को भी जीत लिया था, श्रीराम से विमुख होने के कारण आज कुल में उसका कोई नाम लेने वाला भी नहीं बचा।

आध्यात्मिक सार

इस भाग में तुलसीदास कहते हैं कि श्रीराम अवतारी स्थितप्रज्ञ पुरुष हैं। राम भक्ति के स्रोत व शक्ति से ओत-प्रोत हैं। राम स्वर्ग, राम मोक्ष, राम जीव, राम ब्रह्म, राम आराध्य और परम साध्य हैं। राम वेदों के प्राण समान हैं। रावण की नाभि में अमृत कुंड, बारम्बार उसके शीश और भुजा का उग आना विषयासक्त जीव की इच्छाओं के प्रतीक हैं, जो मनुष्य को मुक्ति के मार्ग पर जाने ही नहीं देतीं।

जीवन में उपयोगिता

1. हमें जीवन में प्राणिमात्र के प्रति परस्पर स्नेह-सम्मान की भावना रखनी चाहिए;
2. कर्त्तव्य-परायण होना चाहिए।
3. स्नेह सूत्र में बँधकर कार्य करने से असंभव भी संभव हो जाता है।
4. बुजुर्गों का तिरस्कार-अपमान नहीं करना चाहिए।
5. इस भाग में वर्णित प्रसंग रणनीति बनाने में सहायक है।
6. कोई भी व्यक्ति अत्याचारी का सम्बन्धी नहीं कहलाना चाहता, जबकि कल्याणकारी व्यक्ति से उसके शत्रु भी जुड़ जाना चाहते हैं।

26

लंकाकाण्ड (दोहा 103 - 121)

नीलम झा

कथा सार

रावण वध के बाद उसकी पत्नी मंदोदरी विलाप करते हुए कहने लगी कि रघुनाथ के समान कृपालु दूसरा कोई नहीं है। जिस प्रकार भगवान ने तुमको सद्गति दी; वह योगिसमाज को भी दुर्लभ है। मंदोदरी के ये वचन सुनकर मुनि, सिद्ध पुरुष व वानर हर्षित हुए। साथ ही सभी राम के मुखमंडल को साक्षात देखकर प्रेममग्न हो गए। अपने घर की स्त्रियों को रोते देखकर विभीषण दुःखी हो गए। वे उनके पास जाकर संवेदना प्रकट करने लगे। यह देख राम ने लक्ष्मण से विभीषण को धैर्य बँधाने के लिए कहा। लक्ष्मण के समझाने पर विभीषण राम के पास लौट आए; तत्पश्चात राम ने विभीषण को शोक त्याग कर भाई की अन्त्येष्टि करने के लिए कहा। विभीषण ने राम की आज्ञा मानते हुए यथोचित विधि से रावण की अंत्येष्टि की। राम ने लक्ष्मण से सुग्रीव, अंगद व हनुमान के साथ जाकर विभीषण का राजतिलक करने को कहा। लक्ष्मण ने वैसा ही किया।

इसके बाद राम ने हनुमान से लंका जाकर जानकी को सब समाचार सुनाने हेतु कहा। सीता ने हनुमान को पहचानकर उनसे राम और लक्ष्मण की कुशलता पूछी। हनुमान ने उन्हें सारी कथा सुनाई। समाचार जानकर सीता अति प्रसन्न हुईं। उन्होंने हनुमान से कहा; "प्रभु राम तुम पर प्रसन्न रहें और समस्त गुण तुम्हारे हृदय में बसें।" फिर उन्होंने हनुमान से कहा; "हे तात! ऐसा उपाय करो कि मैं श्रीराम के दर्शन कर सकूँ।" हनुमान ने वापस आकर सीता का संदेश राम को सुनाया। जानकी का संदेश सुनकर राम ने विभीषण से हनुमान के साथ जाकर ससम्मान उन्हें लाने के लिए कहा।

विभीषण सुंदर पालकी सजाकर, उसमें सीता को बैठाकर ले आये। पालकी रुकते ही वानर व भालू सीता जी के दर्शन करने दौड़े। देवताओं ने पुष्प वर्षा की। सीता के असली रूप को अग्नि में रखा गया था। अब राम उसे प्रकट करना चाहते थे। प्रभु के चरणों में शीश नवा कर सीता ने लक्ष्मण से अग्नि तैयार करने को कहा। आग को देख सीता ने कहा, "यदि मन, वचन और कर्म से मेरे हृदय में रघुवीर को छोड़ कर कोई नहीं है, तो यह अग्नि मेरे लिए चंदन के समान शीतल हो जाए।" कौशलपति की जय बोल कर सीता ने अग्नि में प्रवेश किया। सीता की छाया-मूर्ति और लौकिक कलंक अग्नि में जल गए। प्रभु के अतिरिक्त इस चरित्र को किसी ने नहीं जाना। अग्नि ने शरीर धारण कर सीता को राम को वैसे ही समर्पित किया जैसे क्षीरसागर ने विष्णु भगवान को लक्ष्मी को समर्पित किया था। अब सीता राम के वाम अंग में विराजित हुईं। सभी देवताओं ने आकर राम की स्तुति की। फिर महाराज दशरथ वहाँ आये। राम ने लक्ष्मण सहित उनकी वन्दना की व कहा कि उनके पुण्य प्रताप के कारण ही वे अजेय राक्षस को जीत पाये। इसके बाद राम ने उन्हें अपने दिव्य स्वरूप का दर्शन कराया; दशरथ हर्षित हुए व उन्हें प्रणाम कर देवलोक चले गए।

फिर देवराज इंद्र ने राम की स्तुति की और कहा -"आज्ञा दीजिए कि मैं क्या सेवा करूँ?" राम ने कहा कि जिन वानर, भालुओं ने युद्ध में प्राण त्यागे हैं, उन्हें पुनर्जीवित कर दें। प्रभु राम तो त्रिलोक को जीवित कर सकते हैं; किन्तु उन्होंने इंद्र का मान बढ़ाने के लिए ऐसा कहा। इंद्र ने अमृत की वर्षा कर सबको जीवित कर दिया। सभी देवता विमान में बैठ अपने-अपने लोक चले गये। फिर भगवान शिव ने हाथ जोड़कर प्रभु राम से कहा - "प्रभु आप मेरे हृदय में निवास करें। जब आपका राजतिलक होगा तो मैं आपकी लीला देखने आऊँगा।"

तत्पश्चात विभीषण पुष्पक विमान ले आए। राम, लक्ष्मण और सीता के साथ-साथ सुग्रीव, नल, अंगद, हनुमान व विभीषण सभी विमान में चढ़े। विप्रों को प्रणाम कर उत्तर दिशा की ओर विमान उड़ाया गया। विमान के रवाना होते ही सब श्रीराम की जय-जयकार करने लगे। राम ने सीता को वे सभी स्थान दिखलाए, जहाँ निशाचर मेघनाद, कुम्भकर्ण व रावण मारे गये थे, पुल बँधवाया था और शिवलिंग की स्थापना की थी। राम व सीता ने रामेश्वर महादेव को प्रणाम किया। वन में जहाँ-जहाँ राम ने निवास किया, उन्होंने वे सब स्थान सीता को दिखाये। दण्डकवन पहुँचकर राम अगस्त्य आदि ऋषियों के आश्रम में गये व उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर चित्रकूट गए। राम ने जानकी को यमुना का दर्शन करवाया। तीर्थराज प्रयाग का दर्शन कर त्रिवेणी में स्नान किया। हनुमान से कहा - "तुम ब्रह्मचारी का रूप धरकर अवधपुरी जाओ। भरत को हमारी कुशल कह कर और उनका समाचार लेकर आओ।"

इसके बाद राम भरद्वाज ऋषि के आश्रम गए। ऋषि ने वहाँ राम की अनेक प्रकार से स्तुति की। सबको प्रणाम कर वे गंगा की ओर चले। वहाँ सीता ने गंगा की पूजा की। गंगा ने सीता को अखण्ड सौभाग्यवती रहने का आशीर्वाद दिया। निषादराज भी वहाँ आए और राम के चरणों में गिर पड़े। राम ने उन्हें अपने हृदय से लगा लिया।

आध्यात्मिक सार

इस प्रसंग में सर्वत्र राम के उदारवादी-परोपकारी ब्रह्म स्वरूप के दर्शन होते हैं। तुलसीदास कहते हैं कि रावण के शत्रु का यह पवित्र चरित्र राम के चरणों में प्रीति उत्पन्न करने वाला है। जो राम की विजय सम्बन्धी लीला को सुनते हैं; उन्हें प्रभु नित्य विवेक, विजय और विभूति देते हैं। विश्व की सृष्टि, स्थिति, अंत की सूत्रधारिणी, आद्य शक्ति सीता जगत का कारण और चेतना-शक्ति एवं जगत का रूप हैं।

जीवन में उपयोगिता

1. हमें जीवन में उदारवादी व परोपकारी बनना चाहिए।
2. विभीषण के द्वारा राम को रावण के जीवन का रहस्य बताना यह सिखाता है कि सत्य का साथ देने के लिए अगर अपनों की बलि चढ़ानी पड़े, तो भी पीछे नहीं हटना चाहिए।
3. हमें जीवन में समन्वयवादी बनना चाहिए। मानस के रचना काल को देखें तो पता चलता है कि उस समय भारतीय समाज मुख्यतः दो सम्प्रदायों – वैष्णव और शैव में विभाजित था। वे अपने पंथ (वैष्णव-शैव) तथा आराध्य (राम एवं शिव) को एक-दूसरे से उच्चतर समझने की वजह से प्रायः एक-दूसरे से विद्वेष-विद्रोह में अपना समय व ऊर्जा व्यर्थ गँवाते थे। भगवान के दोनों स्वरूपों को एक दूसरे का उपासक बताकर, एक-दूसरे के प्रति सम्मान दिखा कर, तुलसीदास ने उनके अवलम्बियों-उपासकों के परस्पर द्वन्द्व को निर्मूल कर दिया।

27

उत्तरकाण्ड (आरंभ - दोहा 30)

रुमा रानी गोयल

कथा सार

राम का अयोध्या-आगमन, जीवन के विविध प्रश्नों के उत्तर व सभी देवताओं द्वारा राम की स्तुति ही उत्तरकाण्ड की शोभा है। प्रतीक्षा की अवधि समाप्त होने में केवल एक दिन शेष है; भरत राम के कुशलता पूर्वक लौट आने के संदेश के लिए बहुत व्याकुल हैं। तभी हनुमान संदेशवाहक के रूप में उनके सकुशल लौट आने का समाचार भरत को देते हैं। भरत पहले गुरुओं को, फिर माताओं को और तत्पश्चात नगरवासियों को शुभ समाचार सुनाते हैं। अयोध्या में चारों ओर हर्ष का वातावरण छा जाता है। शुभ शगुन होने लगते हैं। सभी सौभाग्यवती स्त्रियाँ माँगलिक साम्रगी से थाल सजाए, मंगलगान गाती हुई भरत के साथ प्रभु की अगवानी करती हैं। इधर प्रभु राम विमान से सभी वानर सखाओं को पवित्र अयोध्या नगरी दिखा रहे हैं। विमान से उतरकर सर्वप्रथम गुरुजन की वन्दना कर माताओं से मिलते हैं, फिर असंख्य रूप धर सभी जन से एक साथ मिल लेते हैं। इस रहस्य को कोई भी नहीं जान पाता।

राजमहल पहुँचकर राम सबसे पहले माता कैकयी से मिलने स्वयं जाते हैं। श्रेष्ठ समय जानकर गुरु वशिष्ठ प्रभु राम के राजतिलक की घोषणा कर देते हैं। एक बार फिर चारों ओर हर्ष और उत्साह छा जाता है। प्रभु राम अपने भाइयों को स्नान करा, स्वयं स्नान कर, वस्त्राभूषण से सुसज्जित होकर, दिव्य सिंहासन पर जानकी सहित विराजते हैं। पहले गुरु वशिष्ठ राजतिलक करते हैं; फिर अन्य सभी ब्राह्मण व देवता हर्षित हो स्तुति करने लगते हैं।

भाटों के रूप में चारों वेदों ने आकर, प्रभु राम के सगुण और निर्गुण रूप की स्तुति की; मन, वचन व कर्म से सदैव प्रभु चरणों में प्रीति माँगी और अन्तर्धान हो गये। तभी महादेव ने गदगद वाणी में प्रभु की स्तुति की; जिसे आज हम सभी प्रेम से गाते हैं। महादेव बताते है कि जीव तभी सुखी रह सकता है, जब वह सभी परिस्थितियों में एक समान रहे और यह प्रभु चरणों में प्रीति से ही सम्भव है। राम-नाम के महत्त्व का गान कर महादेव भी हर्षित हो, कैलाश चले जाते हैं।

प्रेम-मग्न छह महीने बीतने पर प्रभु राम सभी वानर सखाओं को बुलाकर, पास बैठाकर, उनकी सेवा की प्रशंसा कर, सुन्दर कपड़े व गहने उपहार में देकर निज-निज स्थान को भेज देते हैं। चलते वक्त सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदि सभी हनुमान से प्रभु के चरणों में नित अपनी अर्जी लगाने की विनती करते हैं। काकभुशुण्डि गरुड़ से अयोध्या नगरी की महिमा व रामराज्य के गुणों का बखान करते हैं। लक्ष्मी भी जानकी के रूप में प्रभु राम का ही अनुसरण करती हैं। उनके दो पुत्र होते हैं - लव और कुश। अन्य भाइयों के भी दो-दो पुत्र होते हैं। नित प्रतिदिन भरत और शत्रुघ्न हनुमान से राम-कथा सुनते नही अघाते। नारद, सनक आदि मुनि प्रभु-दर्शन को अयोध्या आते हैं। नगर के सभी स्त्री-पुरुष राम का गुणगान करते रहते हैं और कृपानिधान श्रीराम सब पर सदा अपनी कृपा बनाये रखते हैं।

आध्यात्मिक सार

उत्तरकाण्ड में ही सर्वप्रथम प्रभु राम की स्तुति की गई है। तुलसीदास, महादेव, एवं अन्य देवी-देवताओं ने प्रभु राम की खुले कण्ठ से वन्दना की है। इन स्तुतियों में सम्पूर्ण वेद, पुराण और गीता का ज्ञान समाहित है। प्रभु राम निर्गुण ब्रह्म के सगुण-साकार अवतार हैं। सगुण यानी सद्गुणों की खान। देवता आदि सभी निर्गुण ब्रह्म के सगुण रूप में दर्शन करना चाहते हैं; तभी तो वे राम-चरणों की प्रगाढ़-भक्ति और राम के भक्तों का साथ माँगते हैं। ब्रह्म का सान्निध्य तो देव-दुर्लभ है।

जीव सारा जीवन इस मिथ्या जगत को ही सत्य मान कर इसी में सुख-दुःख का अनुभव करता रहता है। जीवन में जब कभी गुरु या ग्रन्थों के द्वारा उसे इस परिवर्तनशील मिथ्या जगत का आभास होता है, तभी भक्ति का उदय होता है। इच्छाओं का अन्त होने पर वैराग्य घटित होता है। यह सब भक्ति से ही सम्भव है। रामकथा सुनने से स्वतः ही प्रगाढ़ भक्ति का उदय होने लगता है। राम-भक्तों के साथ से जड़ें मजबूत होती हैं; प्रभु-चरणों में भक्ति के साथ प्रीति होने लगती है; जीव प्रभु-काज करने को आतुर रहने लगता है; प्रभु का सेवक बन जाता है।

काकभुशुण्डि गरुड़ से कहते हैं कि जो प्रसन्नता से प्रभु के सेवक बन जाते हैं, उन्हें संत और भगवान सदा प्रिय लगते हैं। राम-नाम की कथा कहने, सुनने और पढ़ने से नाम-जाप भी श्वास के साथ स्वतः ही चलने लगता है; जिससे जन्म-मरण से मुक्ति मिल जाती है।

जीवन में उपयोगिता

1. रामचरितमानस की कथा आज भी हर गृहस्थ के जीवन को सँवारती है। अध्यात्म के साथ-साथ जीवन जीने की कला भी इसमें परिलक्षित होती है; जो काल से परे है।
2. विजय प्राप्त करके अयोध्या आगमन पर जिस प्रकार राम का स्वागत होता है, वह बहुत सटीक रूप में एक परम्परा का निर्वहन करने के समान है। आज भी जब कोई मिशन से विजय प्राप्त करके लौटता है; तो ऐसे ही धूमधाम-पूर्वक स्वागत, सम्मान, आदर, प्रेम और विनम्रता के भाव से वातावरण उत्सवमय बन जाता है।
3. सबको आज भी रामराज्य की ही चाह है। इस काण्ड में राम एक राजा के रूप में हैं। यदि हमारे राजा, नेता, अधिकारी राम के आचरण का अनुकरण करें तो रामराज्य सम्भव हो सकता है।
4. इन चौपाइयों में सर्वाधिक महत्ता अचल भक्ति और भक्तों की संगति बतायी गयी है। यही शाश्वत सत्य है। आज कलियुग में मनुष्य का जीवन संघर्षमय है, दुःखों का सागर है, रोगों और वियोगों से ग्रसित है।
5. गुरु की महिमा अपरंपार है; सद्गुरु-रूपी उत्तर-काण्ड की चौपाइयाँ उत्तम मार्गदर्शक का काम करती हैं। प्रभु राम के चरणों में प्रेमपूर्ण भक्ति ही जीवन में सदा एक समान रहने की शक्ति प्रदान करती है।

28

उत्तरकाण्ड (दोहा 30 - 68)

रुमा रानी गोयल

कथा सार

यह कथा काकभुशुण्डि गरुड़ से एवं महादेव पार्वती से कह रहे हैं। एक बार राम भाइयों और हनुमान के साथ सुन्दर उपवन में गये तो सनकादि मुनि अगस्त्य की प्रेरणा से राम-दर्शन को वहाँ आये। प्रभु से यह ज्ञान पाकर; कि संत के संग से मोक्ष, कामी के संग से बन्धन व दुःख मिलता है; वे निर्गुण स्वरूप राम की सगुण रूप में स्तुति करने लगे। भरत के मन में संतों और असंतों के लक्षण विस्तार में जानने की इच्छा हुई। प्रभु राम ने बताया कि संत सद्गुणो की खान होते हैं, असंत झूठे व सदा दुःख देने वाले होते हैं। नीच और दुष्ट मनुष्य सतयुग व त्रेतायुग में नही होंगे। द्वापर में थोड़े होंगे और कलियुग में झुंड के झुंड होंगे। एक बार प्रभु राम ने गुरु वशिष्ठ जी, ब्राह्मणों एवं अन्य सभी नगरवासियों को जन्म-मरण को मिटाने वाला भेद बताया। इसका आधार भक्ति को ही बताया और कहा कि शंकर जी के भजन के बिना भक्ति नहीं मिलती। जीव के लिए भक्ति का मार्ग ही सरल है; क्योंकि ज्ञान हो जाने पर भी यदि प्रभु के चरणों में प्रीति नहीं होगी तो वह प्रभु को प्रिय नहीं होता। ऋषि वशिष्ठ भी; जन्म-जन्मान्तर तक प्रभु-चरणों में प्रीति कम न हो; यही वरदान प्रभु से माँगते हैं। मोह को दूर करने वाली ऐसी रामकथा सुनकर पार्वती हर्षित हो जाती हैं और महादेव से दूसरी जिज्ञासा का समाधान करने को कहती हैं कि किस प्रकार कौए का शरीर पाकर भी काकभुशुण्डि वैरागी और ज्ञानी हैं, प्रभु चरणों में दृढ़ प्रीति है, गरुड़ ने मुनियों के समूह को छोड़कर कौए से ही जाकर हरिकथा क्यों सुनी? तब शंकर कहते हैं कि जब दक्ष के यज्ञ में अपमानित होकर प्राण त्यागने पर मैं तुम्हारे वियोग में भटकता रहता था तब सुमेरु पर्वत की उत्तर दिशा में नीलपर्वत पर काकभुशुण्डि को देखा। वे वहाँ पीपल के नीचे ध्यान लगा कर जप-यज्ञ करते हैं, आम की छाया में मानसिक पूजा करते हैं और बरगद के पेड़ के नीचे हरिकथा कहते हैं। मैने भी हंस का शरीर धारण करके वहाँ कुछ समय निवास किया। इसीलिए गरुड़ को काकभुशुण्डि के पास भेज दिया; क्योंकि पक्षी ही पक्षी की भाषा भली प्रकार समझ सकेगा। दूसरा; प्रभु की माया बलवती है और बिना कारण कुछ नही होता।

प्रभु के नागपाश काटने पर गरुड़ हरिमाया से भ्रमित हो जाते हैं। तब गरुड़ व्याकुल हो नारद के पास जाते हैं; जो स्वयं माया के भुक्तभोगी हैं, वे समझ गये और उन्हें ब्रह्मा के पास भेज दिया। इस मर्म को जानकर ब्रह्मा ने महादेव के पास भेज दिया। यह मोह आसानी से नहीं जायेगा, पुनः-पुनः रामकथा का श्रवण करना होगा। यह काकभुशुण्डि के पास ही सम्भव था; जहाँ नित सभी बड़े-बूढ़े पक्षी राम का सुन्दर चरित्र सुनते हैं। इसीलिए महादेव ने गरुड़ को काकभुशुण्डि के पास भेज दिया। पक्षीराज गरुड़ ने काकभुशुण्डि से विनम्र तथा प्रेमपूर्ण वाणी में आग्रह किया तो भुशुण्डि ने बड़े प्रेम से रामचरित मानस-सरोवर का रूपक समझाकर, नारद का अपार मोह और रावण का अवतार कहा। तदन्तर मन लगाकर बाल लीलाएँ, वन-गमन, अयोध्या-आगमन, राजतिलक और राजनीति का भी वर्णन किया, जिसे सुनकर पक्षीराज गरुड़ के मन का सन्देह जाता रहा और सत्सगंति व निरन्तरता से राम के चरणों में अटूट एवं निश्चल प्रीति प्राप्त हुई।

आध्यात्मिक सार

माया बहुत बलवती होती है। जो कुछ भी परिवर्तनशील है, वह माया के कारण है। जीव तो क्या; ब्रह्मा, नारद, महादेव तक को इसने नचाया है। माया जीव को भ्रमित कर अभिमानी बना देती है और वह इस संसार को ही यर्थाथ मान उसी

में दुःख-सुख व जय-पराजय का अनुभव करता रहता है। रामकथा से सभी प्रकार के भ्रमों का नाश हो जाता है। सभी देवी-देवताओं व ऋषि-मुनियों का कथन है कि जिन्हें राम के चरणो से प्रीति हो जाती है; उनके सब सन्देह दूर हो जाते हैं।

राम के जीवन को जानने मात्र से ही सन्देह दूर नहीं होते; बल्कि साथ में प्रेमपूर्वक भक्ति का उदय होने पर ही अहंकार मिटता है। इस जीवन का लक्ष्य जन्म-मृत्यु से परे जाना है और यह हरि कृपा से ही सम्भव है। सम्पूर्ण प्रसंग में प्रेम को महत्व दिया गया है। सत्संगति का प्रभाव अटल बताया है। तभी तो सभी गरुड़ को आगे भेजते रहे। अन्त में काकभुशुण्डि से ही उनके सन्देह का समाधान हुआ; क्योंकि वहाँ निरंतर रामकथा होती है और सभी रामभक्तों का निवास भी वहीं है। निरन्तर सत्संगति से ही स्वभाव में परिवर्तन आता है, दृढ़ता और आत्मविश्वास पैदा होता है।

प्रभुभक्ति जो शाश्वत सत्य है; उसकी संगति ही सत्संगति है, मोक्षदायक है। तभी तो सभी यही वरदान माँगते हैं। प्रीति माँगने की नहीं, देने की वस्तु है, देने से ही प्रेम बढ़ता है। कण-कण में प्रभु राम के सिवा काकभुशुण्डि की तरह कुछ और न दिखाई दे।

जीवन में उपयोगिता

1. आज सभी माया से भ्रमित हैं। अहंकार को ही सत्य मान दुःखी होते रहते हैं। मद, मोह, लोभ, क्रोध सभी माया के ही लक्षण हैं। आज भी इन सबको दूर करने का एक ही उपाय है - सत्संगति। नित्य निरन्तर, संतो से जुड़े रहना। संत जाति से नहीं कर्म से संत हों, सद्गुणों की खान हों।
2. जीवन में जैसी संगति होती है, हम वैसे ही होने लगते हैं। जिसे हम नित सुनते हैं, देखते हैं, उसी में रुचि होने लगती है। आज भी टी०वी० का जो सीरियल हम रोज देखते हैं, वह प्रिय लगने लगता है। इसीलिए निरन्तर सत्संगति का महत्त्व आज भी सटीक है; जैसे मंदिर, आश्रम आदि। संत-असंत के लक्षण जानने से जीवन में सजगता आती है।
3. मानव जीवन का लक्ष्य जन्म-मृत्यु के पार जाना है। यह जानकर इस मिथ्या संसार के बन्धन छूटने लगते हैं। यह समझ में आने लगता है कि सब परिवर्तनशील है; इसमें सुखी या दुःखी नहीं होना चाहिये। एक समान रहना चाहिये।

29

उत्तरकाण्ड (दोहा 68 - 104)

नीलम जैन

कथा सार

उत्तरकाण्ड के इस अंश में गरुड़ का संदेह निवारण और उनकी जिज्ञासाओं का समाधान करते हुए काकभुशुंडि ने अपने मानव जीवन से काक बनने तक की संपूर्ण भव-यात्रा के कटु एवं मधुर अनुभवों के माध्यम से राम-नाम की महिमा की हृदयस्पर्शी विशद व्याख्या की है। वे कहते हैं - मानव परनिंदा, द्विजद्रोह, गुरूद्रोह, अहंकार, स्वार्थ, मोह, लोभ, क्रोध, माया, छलकपट आदि दुर्गुणों के कारण ही अपने दुर्लभ मानवजीवन रूपी रत्न को समुद्र में फेंक कर कल्पों-कल्पों तक भटकता रहता है। प्रभु भक्ति में ज्ञानी-अज्ञानी, स्त्री-पुरुष-नपुंसक, कीड़े-मकोड़े, दरिद्र-धनिक आदि का कोई भेद नहीं होता, यहाँ तक कि पशु-पक्षी अथवा किसी भी वर्ण, जाति, कुल के प्राणी भी भक्ति से स्वयं के जीवन को वरदानी व मंगलमय बनाकर प्रभु कृपा का पात्र बन सकते हैं।

इस कलियुग में पापों ने सब धर्मों को ग्रस लिया है, सद्ग्रन्थ लुप्त हो गए हैं, शुभकर्मों का हरण हो गया है, बुद्धि मलिन हो गयी है, सर्वत्र विरोधाभास है, मर्यादाहीनता है, मनोवृत्ति दूषित है, स्वार्थ का आधिपत्य है, संस्कार और मूल्य समाप्तप्राय हैं, सर्वत्र स्त्री-पुरुष, साधु-संत, गुरु-शिष्य, स्वामी-सेवक सभी स्वार्थ-लोलुप, कामी, भोगी व धनप्रेमी हो गए हैं। योग, यज्ञ व ज्ञान भी अर्थाश्रित हैं । स्त्री-पुरुष सभी वेदविरुद्ध आचरण करते हैं। धर्म की आज्ञा की कोई अनुपालना नहीं करता। मनमाने आचरण को ही धर्म की संज्ञा दी जाती है। बकवादी पंडित बन जाता है, ऐसे में मन-वचन-कर्म और पूर्ण समर्पण से की गई श्रीराम की सगुण भक्ति ही भवसागर पार करा सकती है। प्रभु की भक्ति के निर्गुण और सगुण दो माध्यम हैं - सगुण भक्ति हम सरलता से कर सकते हैं और प्रभु की वह कृपा भी प्राप्त कर सकते हैं, जो मुनियों के लिए भी दुर्लभ है, जिसमें प्रभु राम रहते हैं, वह निकृष्ट से निकृष्ट शरीरधारी प्राणी भी प्रभु-प्रिय और पूज्य हो जाता है।

कलियुग इस अर्थ में श्रेष्ठ है कि इस युग में मानसिक पुण्य तो होते हैं, मानसिक पाप नहीं होते। मनुष्य दान से भी पुण्य प्राप्त कर सकता है तथा निर्मल गुण-समूह को गाकर बिना परिश्रम ही संसार से पार हो जाता है।

प्रभु अजन्मे, विज्ञान स्वरूप, सच्चिदानंद, सर्व-व्यापक, अखंड, अनंत, संपूर्ण व अमोघ-शक्ति युक्त हैं। सर्वसमर्थ होते हुए भी भगवान भक्तों की भक्ति और उनके समर्पण से प्रसन्न होकर उनके वशीभूत हो जाते हैं। वे इतने कृपालु होते हैं कि उनकी कृपा से व्यक्ति ज्ञान, विवेक, वैराग्य, विज्ञान आदि में भी सहजता से प्रविष्ट हो जाता हैं। प्रभु की लीलाएँ भी लोक-कल्याण के लिए ही होती हैं। सब कामनाओं को छोड़कर निष्काम भाव से श्रीराम का भजन करना चाहिए।

आध्यात्मिक सार

इस कलियुग में भौतिकवाद का साम्राज्य है। सर्वत्र स्वार्थ, धन-लोलुपता और अर्थ की ही महत्ता है। इसका सर्वाधिक प्रभाव मनुष्य की मानसिकता पर हो रहा है। नैतिक पतन इस सीमा तक पहुँच गया है कि माता, पिता, गुरु सभी का

उद्देश्य केवल उदरपूर्ति रह गया है। जीवन-व्यवस्था बिल्कुल उलट गयी है। संसार में धनसंग्रह की प्रतिस्पर्धा में लोग भूल गए हैं कि धन शाश्वत नहीं रहता; परन्तु धनसंग्रह में किए गए पाप जन्म-जन्मों तक हमें अधोगति में डाल देते हैं ।

वैज्ञानिक युग में मनुष्य ने प्रभु की सत्ता व धार्मिक-आस्था पर विश्वास करना छोड़ दिया है| वह नास्तिक व अहंकारी बनता जा रहा है। सती और गरुड़ की भाँति हम भी अपने जीवन से अहंकार मिटाकर ही प्रभुकृपा तथा भवबाधा से मुक्ति पा सकते हैं। मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य भूल गया है, यही नास्तिकता अंततः विनाश का कारण बनती है। विषय-भोगों के प्रति आसक्ति जितनी कम होती है, उतना ही मन सबल होकर नैतिक मूल्यों के प्रति दृढ़ होता है।

शरीर नश्वर है, दुर्गुण और विकारों से युक्त है| कपट, दुराग्रह, दम्भ, द्वेष, पाखंड, मान, मोह, काम, क्रोध, लोभ, मद आदि से ग्रसित है। प्रभु के नाम का स्मरण करने से हम प्रभु के कृपा-पात्र बन सकते हैं , अपनी आत्मा को परमात्मा बना सकते हैं और देह को देव बना सकते हैं । अमूल्य दुर्लभ मानव शरीर की महत्ता को समझना चाहिए। मन, वचन और कर्म से, पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ अपने पुरुषार्थ का धर्म के अनुशासन में उपयोग करते हुए मोक्ष तक पहुँचना है| प्रभु के नाम का स्मरण करते हुए अपने जीवन को सफल बनाना चाहिए।

जीवन में उपयोगिता

1. हमें विवाद से नही संवाद से और सकारात्मक सोच से ही अपनी समस्याओं का समाधान करना चाहिए। वार्तालाप पूर्ण मनोयोग और धैर्य के साथ होना चाहिए।
2. धार्मिक विद्वेष व हठाग्रह से अहित ही होता है, दूसरो की भी धार्मिक भावनाओं का सम्मान करना चाहिए। सभी को अपने धर्म प्रिय होते हैं।
3. वर्तमान में जब पारिवारिक मूल्य की गरिमा धूमिल हो रही है, संबंधों का रस सूख रहा है, घर व शिक्षा केंद्रों में सदाचार संभव नहीं रहा; ऐसे में हमें मानसिक शांति व सद्गुणों की प्राप्ति के लिए अपना संबंध प्रभु से रखना चाहिए।
4. सुख और शांति के लिए भ्रमित होकर तथाकथित ढोंगी-पाखंडी संतो के चक्कर में न फँस कर स्वयं अपना हृदय कुटिलता और माया-मोह से विलग कर यथासंभव पवित्र एवं सरल बनाने का प्रयास करना चाहिए। कर्म सिद्धांत पर अटूट विश्वास रखना चाहिए।
5. अपने दोषों को अपने विश्वसनीय अनुभवी-जन के समक्ष विनम्रता से प्रकट करना चाहिए तथा उनके प्रति कृतज्ञता का भाव रखना चाहिए। उनसे कुछ भी नही छिपाना चाहिए।
6. गुरुजन और माता-पिता का कभी विरोध नहीं करना चाहिए, उनकी शिक्षाओं व आदेशों का पालन हमारे उत्थान में सहायक बनता है।
7. कोई भी व्यक्ति पूर्ण नही होता। ज्ञान जहाँ भी मिले, लेना चाहिए। ज्ञान व अनुभव में किसी को भी छोटाबड़ा नही समझना चाहिए। ज्ञान के लिए आयु, कुल, जाति, वर्ण आदि की बाध्यता नहीं होती।
8. सच्चा लोकतंत्र वह है जहाँ सबसे अंतिम व्यक्ति भी शिक्षित, संस्कारी, धार्मिक व परोपकारी हो| ऐसे राज्य में सर्वत्र प्रगति, समृद्धि व शांति होती है।
9. अपनी धनसंपत्ति का उदारतापूर्वक दान देने से स्वहित व लोकहित होता है। दान देने से ही यश, प्रतिष्ठा व अतिशयकारी पुण्य प्राप्त होता है तथा धन अक्षय होता है। अर्जन के साथ विसर्जन करने की भी भावना रखनी चाहिए।

30

उत्तरकाण्ड (दोहा 104 - 130)

नीलम जैन

कथा सार

गरुड़ काकभुशुण्डि द्वारा अपने संदेह-निवारण के तर्कों से अभिभूत होकर उनसे प्रेम पूर्वक निवेदन करते हुए सात प्रश्न करते हैं - सर्वश्रेष्ठ शरीर कौन सा है? सबसे बड़ा दुःख क्या है? सबसे बड़ा सुख क्या है? संत किसे कहते हैं? असंत किसे कहते हैं? महान पुण्य कौन-कौन से हैं? भयंकर पाप कौन से हैं? मानस रोग क्या है? काकभुशुण्डि विस्तार से इन सब प्रश्नों का उत्तर देते हैं। मानव शरीर को सर्वश्रेष्ठ बताकर इस के माध्यम से प्रभु की कृपा प्राप्त करने का सांगोपांग वर्णन करते हैं।

भक्ति से ही माया नष्ट होती है। यद्यपि ज्ञान, वैराग्य, योग, विज्ञान भी प्रभु-भक्ति के साधन हैं; किंतु प्रबल माया इनको भी पराजित कर देती है। रघुवीर को भक्ति प्यारी है। माया तो नटी है, जो कि भक्ति से डरती है, ज्ञान से नही। जीव माया से मुक्त होकर ही सुख पाता है। भक्ति के साथ-साथ जो संतों का संग करता है, उसे श्री राम की भक्ति सुलभ हो जाती है। संतजन प्रभु पर आश्रित होते हैं। उनके सम्पर्क में आने से स्वाभाविक रूप से भक्ति का उदय होता है और सत्संग से सभी विकारों को समाप्त करने में सहायता मिलती है। इस शरीर को धारण करके भी जो श्रीहरि का भजन और सत्संग नहीं करते, वे मूर्ख हैं। संसार में दरिद्रता सबसे बड़ा दुःख है और संत-मिलन सबसे बड़ा सुख है। संत दूसरों के लिए दुःख सहते हैं और दुष्ट दूसरों को दुःख देकर सुख पाते हैं।

मानस रोग परनिंदा, माया, मोह, मद, मत्सर आदि दुर्गुणों से जन्म लेते हैं। तत्त्व-ज्ञान व यज्ञ की औषधियों से भी ये रोग समाप्त नहीं होते। केवल भक्ति ही वह संजीवनी है, जो सब रोगों को समाप्त कर सकती है। भक्ति ज्ञान से श्रेष्ठ है; क्योकि ज्ञान प्राप्ति हर किसी के लिए संभव नहीं। चारों युगों में मानव की प्रकृति और प्रवृत्ति भिन्न-भिन्न होती है; किंतु प्रभु प्रत्येक युग में जन्म लेकर समान रूप से भक्तों का कल्याण करते हैं। कलियुग में रामभक्ति ही सुख प्रदायिनी व दुःखविनाशिनी है।

रामकथा सुनने के फल अनंत हैं। नीति में निपुण, बुद्धिमान, वैद्य, कवि, विद्वान, रणधीर ही प्रभु-भक्ति करते हैं। रामकथा संदेह, भ्रम, भय, सभी तापों और पापों को हर कर भवसागर से पार कराती है। तुलसीदास ने इसे लोक-व्यापी और मंगलकारी रूप दिया है। इसके स्मरण मात्र से ही मन में पवित्र व उदात्त भावनायें जाग्रत हो जाती हैं। रामभक्ति ही वह राजपथ है जिस पर चलकर भौतिकता से घिरे संसारी अज्ञजन निर्विघ्न जीवनयापन कर यश व नि:श्रेयस दोनों की प्राप्ति करते हैं।

आध्यात्मिक सार

गरुड़ और काकभुशुंडि का यह संवाद मानस का प्राण है। किसी भी प्रकार की शंका-समाधान का अत्यधिक सटीक, सकारात्मक एवं तथ्यपूर्ण उदाहरण है। काकभुशुण्डि इतने अधिक प्रश्नों को सुनकर उत्तेजित नहीं होते; अपितु धैर्य, संयम, आत्मीयता और विवेक से समस्त प्रश्नों के सटीक तर्कसम्मत व्यावहारिक उत्तर देते हैं।

उत्तरकाण्ड के इस अंश में अनेक नीति और आदर्शसूचक पंक्तियाँ मिलती हैं। आत्मसमर्पण एवं आत्मविलय भक्ति की पहचान है। भक्ति की यही विशेषता है कि उसके लिए हमें किसी प्रकार के बाह्य साधनों की आवश्यकता नहीं होती, कहीं भी कैसी भी स्थिति व परस्थिति में भक्ति बाधित नही होती। भक्ति करने वाले को काल-धर्म भी नहीं सताता।

मनुष्य को प्रतिपल मन को दुर्विकारों और कर्मकाण्डों से परे रखकर प्रभु की व्यापकता, वत्सलता, सामर्थ्य व अनंत बल पर विश्वास रख कर अपने इस मानव शरीर की महत्ता को समझते हुए राम कथा में अवगाहन कर पवित्र रहना चाहिए। इस कथा की यही विशेषता है कि स्वयं ब्रह्मा, महेश नारद इसका गुणगान करते हुए कहते हैं कि इससे जीवनयापन का तरीका ही नहीं; बल्कि जीने का सलीका भी सीखना चाहिए। रामचरितमानस ऐसा मानसरोवर है जिसमें बगुले भी भक्ति पूर्वक प्रार्थना करें तो उनका मानस भी हंस बन जाता है। इसको सुन-पढ़कर अपने मन में उतारना चाहिए और शुभ अवसर पर दूसरों को भी सुनाना चाहिए।

जीवन में उपयोगिता

1. उत्तरकांड का यह अंश वर्तमान में वाणी और लेखनी दोनों के प्रभाव को प्रकट करता है हमारी कठोर दुराग्रही वाणी और सज्जन व्यक्ति की अवेहलना किसी को भी हमारे लिए लोमश ऋषि बनाकर हमारे जीवन को अभिशप्त कर सकती है। एक ही उत्तेजित भाषण से सारा देश दंगों की भेंट चढ़ जाता है।
2. कृति सर्जन का अभिप्राय धनार्जन अथवा स्वार्थ सिद्धि नहीं; अपितु लोकमंगल व स्वसंतुष्टि होना चाहिए, तभी वह जनहितकारी बनेगी; अन्यथा पुस्तक आपसी विद्वेष का कारण भी बन जाती है।
3. गुरु को अपनी गरिमा और शिष्य को अपनी सीमा का ज्ञान होना चाहिये। शिक्षा-स्थल ऐसे हों जहाँ कोई शिक्षार्थी कभी भी आए, उसका बौद्धिक विकास हो। शिक्षास्थलों की प्रामाणिकता एवं विश्वसनीयता से ही ज्ञान, विद्या, गुरु, शिष्य एवं संस्थान गौरवान्वित होते हैं। विद्यालयों को राजनीति का केंद्र और धनोपार्जन का उद्योग नही बनाना चाहिए।
4. पक्षी समाज के राजा गरुड़ को समाधान के लिए जब उसी समाज के निकृष्टतम कहे जाने वाले पक्षी काक के पास भेजा जाता है तो वे अहंकार या संकोच नहीं करते; अपितु उनके सम्मुख हाथ जोड़कर खड़े हो जाते हैं। एक समाधान से संतुष्ट होकर उनका गुणगान कर अपनी लघुता भी प्रकट करते हैं। जब वर्ग, वर्ण, जाति, कुल, लिंग-भेद से परे सबकी प्रतिभा को महत्व दिया जाता है; तभी समाज प्रबुद्ध, सुखी व समृद्ध बनता है।
5. सभी धर्मों का सम्मान करना चाहिए। धार्मिक-उन्माद, धर्मान्धता और पूर्वाग्रहों से मानव का विनाश ही होता है, समाज में अज्ञात भय बना रहता है और परस्पर मनोमालिन्य बना रहता है।
6. प्रत्येक युग की अपनी विशेषता होती है। समय को देखकर किया गया कार्य ही उत्तम फलप्रदायी होता है। निर्णय युगसापेक्ष होने चाहिए।
7. इस स्वार्थी एवं धनलोलुप युग में संत और असंत का भेद जानना अत्यंत आवश्यक है यह ज्ञात होने के पश्चात् संत-प्रवृत्ति के अनुभवी-जन द्वारा बताये मार्ग का अनुगामी बनना ही लाभकारी होता है। धर्म के नाम पर ठगी करने वालों और अन्धविश्वास फैलाने वालों से दूर रहना चाहिए।
8. वर्तमान में शरीर अनेक असाध्य रोगों का घर बना हुआ है। व्याधियाँ हर पल आक्रमण के लिए तैयार हैं। इन व्याधियों का कारण हमारा मोह, माया, अज्ञान आदि मनोविकार ही हैं, हमें इनसे बचना चाहिए। इस भौतिक युग में प्रभु-नाम-स्मरण, रामकथा एवं सत्संग में प्रवृत्त रहने से ही नीरोग रहा जा सकता है।

US $5.95

ISBN 978-1-960627-02-5

सरयू